ISBN 978-93-81076-04-0 अंक 16(1) सितम्बर, 2010

धारणा

आरोग्यम् सुखसम्पदा

राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण संस्थान
मुनीरका, नई दिल्ली-110067

अंक - 16(1) सितम्बर, 2010

धारणा

राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण संस्थान
(स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार)
मुनीरका, नई दिल्ली-110067
वेबसाइटः**www.nihfw.org**
ई-मेलः director@nihfw.org

प्रमुख संपादक
प्रोफेसर देवकी नन्दन

प्रबंध संपादक
डा.अंकुर यादव

उप संपादक
गणेश शंकर श्रीवास्तव

संपादकीय मंडल
डा.वी.के.तिवारी, सदस्य
डा.यू.दत्ता, सदस्य
डा.संजय गुप्ता, सदस्य
अरविन्द कुमार - सदस्य सचिव

डिजाइन
रवि तिवारी

उत्पादन
हेमन्त कुमार उप्पल

- 'धारणा' में व्यक्त विचार लेखकों के व्यक्तिगत विचार हैं तथा यह आवश्यक नहीं है कि यह विचार संस्थान की नीतियों के द्योतक हों।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण संस्थान, नई दिल्ली-110067 द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित

आमुख

यह बड़े हर्ष का विषय है कि विगत पन्द्रह वर्षों से संस्थान की ओर से हिन्दी पत्रिका 'धारणा' का प्रकाशन प्रति वर्ष सफलतापूर्वक हो रहा है। मुझे पाठकों को यह बताते हुए अपूर्व प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है कि ऐसे समय जब यह पत्रिका अपने प्रकाशन के सोलहवें वर्ष में प्रवेश कर रही है हम पाठकों के समक्ष 'धारणा' का सोलहवाँ अंक भी प्रस्तुत कर रहे हैं। इसमें सुखद संयोग यह भी है कि अपने प्रकाशन काल में पहली बार हम 'धारणा' को अर्द्धवार्षिक रूप से पाठकों को समर्पित कर रहे हैं।

मुझे यह उल्लेख करते हुए भी प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है कि राजभाषा नीति के क्रियान्वयन की दिशा में चल रहे प्रयासों के अंतर्गत और जन स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विषय से संबंधित जानकारी उपलब्ध कराने के दृष्टिकोण से तथा संस्थान के संकाय सदस्यों एवं कर्मचारियों में तकनीकी विषयों पर हिन्दी लेखन की प्रवृत्ति को बढ़ावा देने के उद्देश्य की ओर 'धारणा' सफलतापूर्वक अग्रसर है। इसका प्रमाण 'धारणा' के चौदहवें एवं पन्द्रहवें अंक के प्रति पाठकों की सुखद एवं उत्साहवर्द्धक प्रतिक्रियाओं के माध्यम से मुझे प्राप्त हुआ है। पिछले अंकों की सफलता के पश्चात् मेरा विश्वास है कि प्रस्तुत अंक को भी पाठकों की सराहना एवं प्रोत्साहन प्राप्त होगा।

'धारणा' के प्रस्तुत सोलहवें अंक में हमने स्वास्थ्य के प्रति विभिन्न पक्षों पर आधारित ऐसे लेखों का समावेश किया है जो जन सामान्य एवं स्वास्थ्य क्षेत्र से जुड़े शिक्षार्थियों तथा परिवार कल्याण एवं इससे सम्बद्ध जिज्ञासुओं को उपयोगी सामग्री प्रदान करेंगे। सुधी पाठकों से हम यह भी आशा करते हैं कि वे आगामी अंकों में प्रकाशन हेतु जन स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण से सम्बद्ध विषयों पर अपने मौलिक एवं सारगर्भित लेख प्रेषित कर हमें अनुगृहीत करेंगे। आपके सुझावों का भी हम सहर्ष स्वागत करते हैं।

प्रोफेसर देवकी नंदन
निदेशक

संपादकीय

हमारे देश में जन स्वास्थ्य के क्षेत्र में जहाँ एक ओर अनेक प्रकार की विविधतापूर्ण चुनौतियाँ विद्यमान हैं, वहीं दूसरी ओर विकसित देशों की भाँति स्वास्थ्य संगठनों तथा कार्मिक वर्गों की ज्ञान परिधि, अवसंरचनात्मक ढाँचागत व्यवस्था और अन्य सुविधाओं का विस्तार व विकास हुआ है। इसके बावजूद, जन-स्वास्थ्य, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण कार्यक्रमों, प्रजनन शिशु स्वास्थ्य, मातृ-शिशु स्वास्थ्य आदि महत्वपूर्ण क्षेत्रों को और अधिक उन्नत एवं विकसित करने पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

आज समस्त विश्व के समान ही भूमण्डलीय उष्मीकरण की समस्या एवं चुनौती हमारे देश के समक्ष भी बनी हुई है। इस कारण एक ओर पर्यावरण संतुलन बिगड़ा हुआ है, वहीं देश का मौसम, फसलें तथा जन- समुदाय का स्वास्थ्य इत्यादि भी प्रभावित हो रहे हैं। भूमण्डलीय उष्मीकरण की समस्या की गहनता में कमी लाने के एक ठोस उपाय के रूप में हमें ऊर्जा के ऐसे स्त्रोतों के अन्वेषण की आवश्यकता है जिससे पर्यावरण संरक्षण की दिशा में सहयोग प्राप्त हो सके। हम अपने देश में सभी के लिए स्वास्थ्य प्राप्ति का व्यापक लक्ष्य केवल देश के महानगरों, शहरों में बसे लोगों के स्वास्थ्य को लक्षित करके ही पूरा नहीं कर सकते हैं अपितु ग्रामीण क्षेत्रों में बसे विशाल जन समुदाय के स्वास्थ्य के प्रति भी हमें सचेत रहना होगा। इस दिशा में सराहनीय प्रयत्न किए गए हैं, किन्तु इन कार्यों को जन- स्वास्थ्य प्रणाली द्वारा सुदृढ़ बनाकर और अधिक गति प्रदान करने की आवश्यकता है। हमारे प्रयास और सार्थक हो सकते हैं, जबकि जन-जन तक समुचित सूचनाएँ एवं जानकारी सरल तथा बोधगम्य हिन्दी भाषा में पहुँचे। धारणा के इस अंक में स्वास्थ्य संबंधी तकनीकी विषयों पर सारगर्भित एवं सामयिक लेख प्रकाशित किए गए हैं, ताकि सामान्य जागरूकता रखने वाले पाठकों तक भी स्वास्थ्य पक्षों से संबंधित सूचनाएँ पहुँच सके।

'धारणा' के प्रस्तुत अंक में स्वास्थ्य के क्षेत्र में हमारे समाज के समक्ष चुनौती बन कर उभरी कुछ सामयिक समस्याओं तथा विषयों जैसे भूमण्डलीय उष्मीकरण,गर्भावस्था के समय देखभाल, किशोर स्वास्थ्य, महिला सशक्तीकरण, जलवायु परिवर्तन एवं स्वास्थ्य, मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य आदि को शामिल किया गया है। साथ ही, स्वास्थ्य के अधिकार के वैधानिक पक्षों की चर्चा भी इस अंक में की गई है। हमारा प्रयास है कि जन-मानस के ज्ञानस्तर में और अधिक वृद्धि हो सके तथा विषयगत संवाद प्रक्रिया सरल रूप से आगे बढ़ती रहे।

'धारणा' का यह सोलहवां अंक जन-स्वास्थ्य एवं स्वास्थ्य क्षेत्र के कुशल एवं प्रबल पुरोधा एवं उर्जावान निदेशक प्रोफेसर देवकी नंदन द्वारा प्रदत्त सतत् मार्गदर्शन और प्रेरणा से ही साकार रूप ले सका है। विद्वान लेखकों के योगदान एवं संपादन मंडल के सक्रिय रूप से परामर्श के लिए हम आभारी हैं। 'धारणा' की प्रकाशन प्रक्रिया में हिन्दी कक्ष के सदस्यों सहित संपादन प्रक्रिया में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करने वाले सभी सदस्यों का भी मैं धन्यवाद व्यक्त करता हूँ, जिनके बहुमूल्य प्रयासों से यह प्रकाशन मूर्त रूप ले सका है। इस पत्रिका के सतत् विकास के लिए आपके सुझावों, योगदान तथा प्रतिक्रियाओं का हम स्वागत करते हैं। हम आपको यह भी सहर्ष सूचित करना चाहते हैं कि आगामी अंकों को हम यथावत छमाही रूप से प्रकाशित करते रहेंगे। कृपया अपने सारगर्भित लेख हमें भेजकर इस प्रयास में हमारा सहयोग करें। आप अपने लेख हिन्दी फॉन्ट क्रुतिदेव 010 (kruti dev 010) में टाइप कराकर ankuryadav41@yahoo.co.in अथवा ganeshrishinihfw@ gmail.com पर भी भेज सकते हैं। आशा है, इस अंक में समाहित विषय-सामग्री तथा जानकारी व्यापक जन समुदाय के चिंतन और ज्ञान भंडार के लिए उपयोगी हो सकेगी।

डॉ. अंकुर यादव
प्रबंध संपादक

विषय सूची

क्रम	शीर्षक	लेखक	पृष्ठ संख्या
	आमुख		i
	संपादकीय		iii
1	महिला सशक्तिकरण : चुनौतियाँ एवं संभावनाएँ	डा. संजय कुमार प्रोफेसर देवकी नंदन	1
2	भोजन में जिंक तत्व की अधिकता के खतरे	प्रोफेसर वी. के. तिवारी	4
3	स्वास्थ्य का अधिकारः वैधानिक स्थिति	शत्रुञ्जय शर्मा गणेश शंकर श्रीवास्तव	7
4	हरियाणा राज्य में ग्रामीण स्वास्थ्य एवं प्रशासन	सुखदेव कुमार	12
5	कैल्शियम से जुड़ा है - हड्डियों का स्वास्थ्य	प्रोफेसर जे. के. दास मनीषा	17
6	भूमंडलीय उष्मीकरण एवं स्वास्थ्य	प्रोफेसर वी. के. तिवारी अरविन्द कुमार	22
7	कंगारू मातृ सुरक्षा : शिशु का अधिकार एवं माँ की अनुभूति	डा. गीतांजलि	27
8	जलवायु परिवर्तन : कारण और निवारण	ओम कुमार कर्ण	31
9	किशोरावस्था की प्रमुख मानसिक समस्याएँ	कृष्ण चन्द्र चौधरी डा. अंकुर यादव	36
10	वायु का जनस्वास्थ्य पर प्रभाव	डा. पूनम सिंह	41
11	गर्भावस्था : आहार एवं विहार	सरिता कुमारी	47
12	मध्य वर्ग : अवधारणा एवं स्वरूप	डा. राजेश कुमार	52
13	कविताएँ		62
	(i) मारक रोग कैंसर	अरविन्द कुमार	57
	(ii) धुएं के बादल	डॉ. संजय राठौर	58
	(iii) प्रभु ऐसी शक्ति देना मुझे	डा. त्रिलोक कुमार झा	59
	(iv) मेरी बिटिया	गणेश शंकर श्रीवास्तव	60
	(v) दिल के दर्द का अफसाना	डा.श्रीधर द्विवेदी	61
	(vi) सहोदर बीमारियाँ	डा.श्रीधर द्विवेदी	61

महिला सशक्तिकरणः चुनौतियां एवं संभावनाएं

डा0 संजय कुमार*
प्रोफेसर देवकी नंदन**

किसी भी समाज का स्वरूप वहां की महिलाओं की दशा एवं दिशा पर बहुत हद तक निर्भर करता है। यह एक प्रायोगिक सत्य है कि जिस समाज में महिलाओं की स्थिति सुदृढ़ और सम्मानजनक होगी वह समाज भी सुदृढ़ और विकसित होगा। हम देखते हैं कि आधुनिक काल की अपेक्षा प्राचीन भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति अधिक दृढ़ थी। उन्हें पुरूषों के समान अधिकार भी प्राप्त थे तथा समस्त सामाजिक धार्मिक कार्य-कलापों में उनकी सहभागिता अनिवार्य थी। कालांतर में भारत पर होने वाले लगातार विदेशी आक्रमणों के परिणामस्वरूप धीरे-धीरे महिलाओं की स्थिति में गिरावट आई और वर्तमान में स्थिति यह है कि हमें उन महिलाओं के सशक्तिकरण पर चर्चा करनी पड़ रही है, जो स्वयं में शक्ति स्वरूपा है, अन्नपूर्णा है; सृष्टि का प्रमुख आधार है।

वस्तुतः भारत का सामाजिक ढाँचा ही महिलाओं और पुरूषों की पृथक-पृथक भूमिकाओं का निर्धारण करता है। जिसके परिणामस्वरूप वर्तमान में प्रत्येक स्तर पर महिलाओं के साथ भेद-भाव किया जाता है। आज अमेरिका सहित कोई भी राष्ट्र यह दावा करने में असमर्थ है कि उनके देशों में किसी भी रूप में महिला का उत्पीड़न नहीं किया जाता।

लम्बे संघर्ष के पश्चात् भारतीय महिलाओं ने समाज में अपनी स्थिति में सुधार ला पाने और समाज में अपना कुछ स्थान बनाने में सफलता अर्जित की है। महिलाओं की स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन दृष्टिगोचर हो रहे हैं, किन्तु इन परिवर्तनों की गति काफी धीमी है। महिलाओं के सशक्तिकरण की अवधारणा ही सामाजिक न्याय, लोकतंत्र एवं समेकित सामाजिक विकास के उद्देश्यों पर आधारित है।

सशक्तिकरण वह बहु-आयामी प्रक्रिया है, जो कि महिलाओं में सामाजिक तथा आर्थिक संसाधनों पर नियंत्रण स्थापित करने की क्षमता का पर्याप्त विकास करने का प्रयत्न करती है। सशक्तिकरण से अभिप्राय शक्ति का अधिग्रहण मात्र नही है, अपितु इसके द्वारा उनमें शक्ति के प्रयोग की क्षमता का समुचित विकास किया जाता है। महिलाओं को सामाजिक हाशिए से हटाकर समाज की मुख्य धारा में लाना, निर्णय लेने की क्षमता का विकास करना, उनमें पर-आश्रितता की भावना और हीन भावना को समाप्त करना ही सशक्तिकरण है।

भारत में प्रतिवर्ष बहुत सी महिलाएं गर्भधारण के कारण अथवा बच्चे के जन्म के समय मृत्यु का शिकार बन जाती हैं। इसका मुख्य कारण है कि अधिकतर गर्भवती ग्रामीण महिलाएं निरक्षर हैं। भारत में महिलाओं को अपने स्वास्थ्य के प्रति भी निर्णय लेने का अधिकार प्राप्त नहीं

* छात्र, अंतिम वर्ष, एम0 डी0(सी.एच.ए.), राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण संस्थान, नई दिल्ली-110067
** निदेशक, राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण संस्थान, नई दिल्ली-110067

है, न हीं उन्हें गर्भधारण के निर्णय का अधिकार होता है और न हीं उनके पास अपने स्वास्थ्य पर धन खर्च करने का निर्णय होता है। निर्णयन संबंधी समस्त कार्य या तो उसका पति या घर का कोई अन्य वरिष्ठ पुरूष करता है।

सरकारी आंकड़ो के अनुसार भारत में प्रतिवर्ष 1 लाख 25 हजार महिलाएं गर्भावस्था या बच्चे के जन्म के समय मृत्यु का शिकार होती है। 30% लड़कियां अपना 15वां जन्मदिवस नहीं देख पाती। कक्षा मे प्रवेश लेने वाली प्रत्येक 10 लड़कियों में से 6 लड़कियां ही कक्षा पांच तक पहुँच पाती हैं।

विश्व में काम के घण्टों में 60% से अधिक का योगदान महिलाओं का है। फिर भी, वे मात्र एक प्रतिशत सम्पति की ही मालिक हैं। महिलाएं एक दिन मे पुरूषों की अपेक्षा 6 घण्टे अधिक कार्य करती हैं। बावजूद इसके उन्हें महत्वहीन समझा जाता है। कामकाजी महिलाओं में 50% कार्यस्थल पर उत्पीड़न का शिकार होती हैं। 1996 में अंतर्संसदीय परिषद द्वारा किए गए एक सर्वेक्षण के अनुसार विश्व के सभी देशों में 10% राजनीतिक दलों का ही नेतृत्व महिलाएं करती हैं। विकसित देशों की लोकतांत्रिक संस्थाओं में भी महिलाओं को उनकी संस्था के अनुपात मे प्रतिनिधित्व प्राप्त नही है।

अपने देश मे स्त्री-पुरूष साक्षरता एवं लिंग अनुपात पर दृष्टिपात करने पर ज्ञात होता है कि देश में महिलाओं के प्रति बढ़ रहे अपराधों के कारणों में प्रमुख हैं- धर्म, जाति, वर्ग, पारिवारिक संरचना, विवाह पद्धति, नातेदारी, औद्योगीकरण, नगरीकरण, पाश्चात्य शिक्षा एवं संस्कृति, आधुनिकीकरण, बढ़ता उपभोक्तावाद आदि।

स्वाधीनता के पश्चात भारत के संविधान में अनुच्छेद-14 के अन्तर्गत स्त्री पुरूष समानता पर चर्चा की गई है। हिन्दू विवाह अधिनियम 1955, विशेष विवाह अधिनियम 1954, विधवा पुनर्विवाह अधिनियम 1956, हिन्दू दत्तक ग्रहण एवं भरण पोषण अधिनियम 1956 के माध्यम से जहां महिलाओं को सामाजिक अधिकार प्रदान किए गए वहीं हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 द्वारा उसे सम्पति का अधिकार प्रदान किया गया है। इसके अतिरिक्त उसके अधिकारों के साथ-साथ उसके सम्मान को सुरक्षा प्रदान करने की दृष्टि से 1948 में फैक्टरी अधिनियम तथा 1976 में समान पारिश्रमिक अधिनियम अस्तित्व में आए। समाज के सभी वर्गों की 18 वर्ष से ऊपर की महिलाओं को चाहे वे शिक्षित हों अथवा अशिक्षित, पुरूषों के समान मताधिकार प्रदान किया गया है। इसके अतिरिक्त महिलाओं के कल्याणार्थ 1961 में दहेज निषेध अधिनियम एवं प्रसूति लाभ अधिनियम, 1986 में अश्लील चित्रण निवारण अधिनियम, 2005, जननी सुरक्षा योजना तथा घरेलू हिंसा महिला (संरक्षण) अधिनियम 2006 भी पारित किए गए।

महिला सशक्तिकरण की दिशा में ठोस प्रयास करते हुए सरकार द्वारा 1985 में महिला एवं बाल विकास विभाग की स्थापना तथा 31 जनवरी 1992 को राष्ट्रीय महिला आयोग की स्थापना की गई। 1992 से देश में अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस मनाया जाने लगा। भारत सरकार, ने वर्ष 2001 को महिला सशक्तिकरण वर्ष घोषित किया।

महिलाओं के कल्याण हेतु सरकार द्वारा अनेक योजनाओं एवं कार्यक्रमों का कार्यान्वयन किया गया है, इनमें प्रमुख हैं- महिला समृद्धि योजना, महिला समाख्या, इंदिरा महिला योजना, बालिका समृद्धि योजना, स्वंयसिद्धा योजना आदि। सरकार द्वारा महिला उत्थान की दिशा में किए गए इतने प्रयासों के पश्चात भी भारतीय समाज में महिलाओं की दशा सोचनीय है। यही पसंद-नापंसद लैंगिक भेदभाव का सर्वप्रमुख कारण है, जो कि पारिवारिक स्तर पर महिलाओं के प्रति हिंसा को प्रोत्साहित करते हैं व महिलाओं को समाज में पुरूषों के समान अधिकार एवं स्वतंत्रता का उपभोग करने से रोकता है।

इसके अतिरिक्त समाज मे महिलाओं की दुर्दशा का एक अन्य प्रमुख कारण सरकारी योजनाओं का उचित क्रियान्वयन न होना है जिसके कारण अपेक्षित परिणामों की प्राप्ति नहीं हो पा रही है। यह कहा जा सकता है कि महिलाओं की बदतर स्थिति के लिए अकुशल प्रंबधन के साथ-साथ समाज भी समान रूप से दोषी व उत्तरदायी है।

महिला सशक्तिकरण की दिशा मे किए जाने वाले प्रयासों को सफल बनाने हेतु यह आवश्यक है कि, समाज की मानसिकता विशेष रूप से स्वयं महिलाओं की मानसिकता में परिवर्तन लाया जाए। समाज महिलाओं को कमतर दृष्टि से न देखे अपितु उसे एक मनुष्य माने तथा महिलाएं भी अपने आप को अबला न समझें बल्कि अपनी कुशलताओं का विकास करें। इस दिशा में सरकार के अतिरिक्त गैर-सरकारी संगठन भी प्रभावशाली भूमिका निभा सकते हैं। इसके साथ ही महिलाओं की स्थिति को नीचा बनाने वाली सामाजिक परम्पराएं समाप्त की जानी चाहिए, महिलाओं के साक्षर बनाने की दिशा मे ठोस प्रयास किए जाने चाहिए, महिलाओं की गरिमा का सम्मान किया जाना चाहिए, उत्पीडित महिलाओं को सरकारी व गैर-सरकारी संगठनो द्वारा पर्याप्त सहायता दी जानी चाहिए तथा महिलाओं के लिए स्व-रोजगार योजनाओं आदि को महत्व प्रदान किया जाना चाहिए।

राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर समय-समय पर आयोजित होने वाली संगोष्ठियों एवं सम्मेलनों में महिला सशक्तिकरण संबंधी विचारों से इस तथ्य को बल प्राप्त होता है कि महिला का स्वावलंबी व सशक्त होना वर्तमान समाज की आवश्यकता है, किन्तु मात्र लम्बे-चौड़े भाषणों और वाद-विवादों से महिलाओं का उत्थान संभव नही है। इसके लिए समाज के महिला सशक्तिकरण के पौधे को अपने प्रयास रूपी जल से सींचना होगा, महिलाओं को उनकी प्रतिष्ठा व सम्मान लौटाना होगा, इन सबसे ऊपर नारी को अपने अस्तित्व, अपने 'स्व' की पहचान बनानी होगी तभी महिला सशक्तिकरण का लक्ष्य प्राप्त हो सकेगा।

भोजन में जिंक तत्व की अधिकता के खतरे

प्रोफेसर वी. के. तिवारी*

यह सर्वविदित है कि मानव शरीर एक यंत्र की भाँति कार्य करता है तथा इसके कार्य संचालन के लिए विभिन्न प्रकार के खनिज, विटामिन व लवण आदि भोज्य पदार्थों की आवश्यकता होती है। जिंक एक सूक्ष्म मात्रिक विरल खनिज तत्व है जो हमारे विभिन्न कायकीय गतिविधियों के लिए आवश्यक होता है। मानवीय भोज्य पदार्थों में जिंक खनिज का उचित मात्रा में समावेश एवं प्रयोग शारीरिक स्वास्थ्य की दृष्टि से परम लाभदायक होता है। जिंक सूक्ष्म पोषक तत्व होने के कारण भोजन में प्रयोग करने से हानिकारक होता है तथा विगत वर्षों से सूक्ष्म पोषक तत्व के रूप में, कृषि तथा पशुपालन के क्षेत्र में तथा बहु विटामिन संपूरक आहार के रूप में भी इसका प्रयोग किया जा रहा है। जिंक हमारे शरीर के प्रत्येक ऊतक में विद्यमान होता है तथा मानव शरीर की प्रतिरक्षी प्रणाली की सुचारू कार्यप्रणाली के लिए अनिवार्य रासायनिक प्रतिक्रियाओं को संचालित करने में सहायक होता है। सामान्य वयस्कों के लिए भोजन में 5-15 मि.ग्रा. जिंक घटक आवश्यक होता है तथा गर्भस्थ शिशु के समुचित विकास हेतु गर्भवती महिलाओं हेतु 10-25 मि.ग्रा. जिंक भोजन में आवश्यक है।

जिंक प्रचुर आहार क्यों?

मानव भोजन में जिंक भिन्न-भिन्न खाद्य पदार्थों में विशेषतः प्रोटीन में प्रचुर मात्रा में मिलता है। वनस्पति अथवा शाकाहारी खाद्य पदार्थों में मांसाहारी भोजन की तुलना में जिंक की मात्रा कम होती है। मानवीय भोजन में जिंक प्रचुर खाद्य पदार्थों जैसे - सूखे मेवे, गेहूँ, बीज, समुद्री भोजन, डेयरी उत्पादों, बीन की फलियाँ, खमीर तथा मोटे अनाज में उपलब्ध होता है। दालों, सब्जियों, फलों आदि में जिंक बहुत कम मात्रा में होता है।

जिंक संबंधी वर्तमान परिदृश्य से ज्ञात होता है कि पोषण घटकों की शोध के क्षेत्र में की गई प्रभावी प्रगति के बावजूद भी इस तत्व की जैविक भूमिका तथा न्यूनतम आवश्यकता अभी काल्पनिक ही है। चूँकि कुछ अनुरेखित तत्वों की न्यूनतम आवश्यकता बहुत कम है, तथापि यह सामान्य विश्वास है कि इन अनुरेखित तत्वों की पोषणात्मक कमी मानव शरीर में विरले ही मिलती है। खाद्य प्रौद्योगिकी में हुए नवीनतम विकास के कारण सम्पन्न देशों के लोगों को खाद्य वस्तु प्रचुर मात्रा में प्राप्त होने लगी है। अनुरेखित तत्व के पोषणात्मक महत्व का आकलन करने के उद्देश्य से इनके चयापचयी नियमन घटकों पर विचार करना संगत होगा। वास्तविक बाह्य स्तर तथा जैविक उपलब्धता पोषणात्मक रूप से प्रमुख दो घटक हैं। इस संबंध में विकासशील देशों में अत्यंत सीमित सूचनाएँ उपलब्ध हैं। भोजन ग्राह्यता असंतोषजनक होने के कारण अनुरेखित तत्व समस्याओं को कम वरीयता प्राप्त होती है।

* विभागाध्यक्ष, योजना एवं मूल्यांकन विभाग तथा कार्यवाहक उपनिदेशक (प्रशा.), राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण संस्थान, नई दिल्ली।

भारत में चंडीगढ़, पंजाब राज्य में विभिन्न सब्जियों की अनुरेखित धातु खनिज स्थिति के बारे में किए गए नवीनतम सर्वेक्षण से यह पता चला है कि यद्यपि जिंक तत्व हमारे भोजन में एक अनिवार्य घटक है, किन्तु यह हमारे शरीर के लिए हानिकारक भी हो सकता है। भोजन के माध्यम से अधिक जिंक लेने के कुप्रभाव क्रमशः शिशु, महिलाओं एवं पुरूषों हेतु 5,12, तथा 15 मि.ग्रा. जिंक आहार लेने संबंधी संस्तुतित आहार मात्रा की तुलना में 10-15 गुणा अधिक है।

भोजन में अधिक जिंक के हानिकारक प्रभाव

हमारे भोजन में जिंक खनिज की अधिकता के कारण पोषक तत्वों की खपत अधिक होती है तथा जीन की क्रियाएँ तीव्र हो जाती हैं, जिससे भूख में वृद्धि होती है। अतिआनुवंशिक तथा आनुवंशिक रूप से स्थूल चुहिया की हार्मोन वृद्धि के बारे में संचालित अन्वेषण द्वारा यह ज्ञात हुआ है कि जिंक के वृद्धि प्रेरित प्रभाव हार्मोनों के माध्यम से होते हैं जिनकी क्रियाशीलता जिंक पर निर्भर होती है। इससे वृद्धि दर पर भी अनुकूल प्रभाव पड़ता है। इसके अतिरिक्त शरीर में स्थूल कोशिकाओं में भी वृद्धि होती है। वयस्क अवस्था होने की स्थिति में वृद्धि हार्मोन बंद कर देने पर उचित इंसुलिन गतिविधि के कुप्रभाव में शोषित पोषक तत्व स्थूल कोशिकाओं की ओर आकर्षित होते हैं तथा वर्जित वसा के रूप में संचित हो जाते हैं तथा जन्तु, मानव तथा पौधों में विकास दर तीव्र हो जाती है।

इसी प्रकार बच्चों को जिंक युक्त संपूरक आहार देने पर उनके शारीरिक विकास में तेजी से वृद्धि होती है तथा उनकी शारीरिक कोशिकाओं एवं ऊतकों में वसा जमा होता रहता है। इस स्थिति में बच्चे स्वस्थ तथा मोटे प्रतीत होते हैं किन्तु किशोर तत्पश्चात वयस्क होने तक अनेक शारीरिक समस्याओं से ग्रस्त हो जाते हैं। उनके शरीर में ऊतकों विशेषतः स्थूल कोशिकाओं की अधिकता होने के कारण वयस्क होने पर वे अत्यंत मोटे हो जाते हैं। आज शहरी आबादी में अधिकांश व्यक्ति इंसुलिन के असंतुलन के परिणामस्वरूप मधुमेह तथा शारीरिक श्रम के कम होने के कारण स्थूल काया की समस्या से ग्रस्त हैं। इनके अतिरिक्त, अनेक व्यक्ति अति तनाव, क्रोध, अवसाद एवं हृदयवाहिका रोगों का सामना भी कर रहे हैं। अनेक शोध निष्कर्षों से यह भी स्पष्ट हुआ है कि लम्बे समय तक जिंक प्रचुर भोजन लेने के कारण बढ़ते बच्चों में इन रोगों के लक्षण बारम्बार दिखने लगते हैं। इसलिए 'उपचार से श्रेष्ठ परहेज है' कहावत का अनुसरण करके भोजन में जिंक की प्रचुरता को कम किया जाना चाहिए। यह भी पता चला है कि भोजन में कांस्य एवं जिंक तत्व के असंतुलन से कभी-कभी रोग स्तर की उग्रता अधिक हो जाती है।

भोजन का मधुमेह के रोगियों पर प्रतिकूल प्रभाव

भोजन में जिंक की प्रचुरता से मधुमेह से ग्रस्त रोगियों के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। विशेषकर लम्बे समय तक जिंक युक्त भोजन अधिक लेने के कारण मधुमेह के रोगियों का ग्लाडफोसिलेडिड हीमोग्लाबिन (एच.बी.ए.सी.) स्तर बढ़ जाता है। इसके अतिरिक्त, उन्मुक्त जीवनयापन करने वाले समुदाय में जिंक अनुपूरक भोजन का प्रयोग करने से हतोत्साहन बढ़ा है, इसके परिणामस्वरूप उनमें कांस्य तत्व की कमी प्रतीत हुई है।

गर्भवती महिलाओं पर प्रभाव

गर्भवती महिलाओं को जिंक-प्रचुर भोजन अधिक देने से यह स्पष्ट हुआ है कि इससे भ्रूण में कांस्य तत्व की कमी हुई तथा गर्भावस्था पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। मानव तथा जंतुओं में दीर्घकाल तक कांस्य तत्व की कमी होने पर गर्भ में भ्रूण की मृत्यु तक होने की संभावना हो सकती है। समय-पूर्व प्रसवित नवजात शिशुओं की मृत्यु होने में श्वसन अवरोध व मंदन अवरोध भी एक मुख्य कारण हो सकता है।

निष्कर्ष

आजकल शहरी लोगों तथा ग्रामीण क्षेत्रों में रहनेवाले लोगों में स्थूलता अर्थात मोटापा, मधुमेह, अति-तनाव, हृदयाघात और विकासात्मक विकारों के साथ-साथ आनुवांशिकीय विकारों में अत्यंत तीव्रता से वृद्धि हुई है, विशेषतः युवावस्था के लोगों में इन विकारों के संकेत निरंतर प्राप्त होना भविष्य के लिए खतरे का सूचक है। यह विकार प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में कृषि उत्पादों से सह-संबंधित है। इस स्थिति में भोजन में जिंक पोषक तत्वों को नियंत्रित करना अथवा संतुलित मात्रा में व्यवस्थित करना आवश्यक हो जाता है। इस रणनीति द्वारा हमें बच्चों विशेषकर किशोरों, युवाओं में बढ़ती मधुमेह, मोटापे, अति-तनाव आदि विकारों पर नियंत्रण प्राप्त करने में सफलता प्राप्त हो सकती है।

इसके अतिरिक्त कांस्य के बर्तनों में भोजन पकाने से न केवल शरीर में कांस्य तत्व को व्यवस्थित करने में सहायता प्राप्त हो सकेगी अपितु जिंक की प्रचुरता में भी कमी आएगी। इस रणनीति के कारण हम मोटापे की बढ़ती समस्या को समय रहते नियंत्रित कर सकेंगे अन्यथा हमें स्थूलता जनित अनेक रोगों से दीर्घकाल तक जूझना पड़ सकता है।

संदर्भः

1. डब्ल्यू.सी.पेटरसन, एम. विंकलमैन एवं एम.सी.पेरी, एन.इंटर्न मेड, 103, 385-389,1985।
2. एवरीमैन्स साइन्स खण्ड - संख्या -4, अक्टूबर-नवम्बर, पृष्ठ 230-233 से साभार।

स्वास्थ्य का अधिकारः वैधानिक स्थिति

शत्रुञ्जय शर्मा*
गणेश शंकर श्रीवास्तव**

अधिकारों की आवश्यकता

यह निर्विवाद है कि व्यक्ति समाज का अविच्छिन्न अंग होता है। उसकी समूह प्रवृत्ति उसे समाज के अन्य व्यक्तियों के सम्पर्क में लाती है और उनसे संव्यवहार करने के लिए उसे प्रेरित करती है। मनुष्य का सामाजिक जीवन इन्हीं संव्यवहारों पर आधारित है। समाज में मानव के आचरणों और व्यवहारों पर उचित नियंत्रण रखना आवश्यक है ताकि उनके परस्पर हितों की रक्षा हो सके। इसी उद्देश्य से राज्य द्वारा विधियों का निर्माण किया जाता है जो नागरिकों को उनके कर्तव्यों तथा दायित्वों का बोध कराती है साथ ही उनके अनुचित व्यवहारों के लिए उन्हें दंडित करने का अधिकार राज्य को देती है।

इसमें संदेह नहीं कि किसी भी देश की विधि पर वहाँ की सामाजिक तथा आर्थिक परिस्थितियों का गहरा प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिए, वर्तमान भारतीय दण्ड संहिता में गर्भपात को कुछ परिस्थितयों में कानूनी वैधता प्रदान करना यह दर्शाता है कि नैतिकता के प्रति हमारी धारणाओं में परिवर्तन हुआ है। इसी प्रकार हिन्दू विधि में विवाह-विच्छेद संबंधी कानून में शिथिलता तथा महिलाओं के प्रति इसे विशेष उदार बनाया जाना इस बात का परिचायक है कि वर्तमान भारतीय समाज महिलाओं के अधिकारों के प्रति जागरूक हैं तथा उनके प्रति समानता की नीति अपनाना चाहता है। मानव सभ्यता के विकास का वास्तविक श्रेय विधि और उसकी निषेधात्मक प्रक्रिया को है जिसने व्यक्ति को समाज के सदस्यों के रूप में अपने कर्तव्यों और अधिकारों का बोध कराया है। अधिकार दो तरह के हो सकते हैं - नैतिक अधिकार तथा विधिक अधिकार। नैतिक अधिकार प्राकृतिक न्याय के नियमों द्वारा मान्य तथा संरक्षित होते हैं तथा उनका उल्लंघन नैतिक अपकार कहलाता है। विधिक अधिकार राज्य की विधि द्वारा मान्य तथा संरक्षित होते हैं।

ऐसे अनेक उदाहरण हो सकते हैं जिनका पालन न किया जाना विधिक दृष्टि से अपकार नहीं माना जाता जैसे- किसी तैराक द्वारा डूबते हुए बालक को बचाने की कोशिश न करना नैतिक दृष्टि से तो गलत है किन्तु विधिक दृष्टि से कोई अपकार नहीं। माता-पिता का यह अधिकार है कि उनके बच्चे उनकी आज्ञा का पालन करें। इसी प्रकार अपने माता-पिता का स्नेह पाने का बच्चों को अधिकार है।

* व्याख्याता, शक्ति स्मारक महाविद्यालय, बलरामपुर (उत्तर प्रदेश)
** उपसंपादक (हिन्दी), राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण संस्थान, नई दिल्ली.

राज्य के विरूद्ध अधिकारों का प्रयोग

पहले राज्य द्वारा अधिकार हनन किये जाने पर कोई सुनवाई नहीं होती थी क्योंकि माना जाता था कि क्राउन कभी गलती नहीं करता। लेकिन अब यह अवधारणा नहीं है कि राज्य का कोई कर्तव्य नहीं होता। राज्य के विरूद्ध अधिकार वास्तविक अर्थों में अपूर्ण अधिकार होते हैं क्योंकि इन्हें राज्य ही लागू कराता है। राज्य अगर न चाहे तो अधिकारों का केवल न्यायालयीन महत्व ही रह जायेगा। कई अधिकार ऐसे हो सकते हैं जिन्हें विधि द्वारा तो मान्य किया जाता है किन्तु इनका प्रवर्तन नहीं करवाया जा सकता। बहुत से अधिकार ऐसे भी हो सकते हैं जिनको लागू कराने के लिए न्यायालयों के पास समुचित नियंत्रण शक्ति नहीं होती।

स्वास्थ्य के अधिकार की विधिक स्थिति

मानव सभ्यता के विकास के साथ-साथ व्यक्ति के कार्यकलापों में भी उल्लेखनीय अभिवृद्धि हुई जिसके परिणामस्वरूप सामाजिक जटिलताओं का प्रादुर्भाव हुआ। इन समस्याओं को सुलझाने के लिए राज्य के द्वारा विधि का प्रयोग किया जाने लगा। वर्तमान समय में विधि को सामाजिक परिवर्तन के साधन के रूप में प्रयुक्त किया जा रहा है। मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा में आर्थिक और सामाजिक अधिकारों की श्रेणी के तहत अनुच्छेद 25 के तहत अपने और अपने कुटुम्ब के स्वास्थ्य के लिए पर्याप्त जीवन स्तर का अधिकार प्रदान किया गया। इसको अधिकार के रूप में शामिल करने में काफी विवाद था। कई राज्य इन अधिकारों को मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा में सम्मिलित करने पर सहमत नहीं थे। इस अधिकार को सर्वमान्य नहीं माना गया। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर यह प्रथम प्रयास था। इसके पश्चात महासभा द्वारा **1966 में दो प्रसंविदायें संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा पारित की गयी जिनमें पहली सिविल तथा राजनैतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा तथा दूसरी प्रसंविदा आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकारों पर थी। आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा (ICESC) के अनुच्छेद 7 में कार्य की न्यायोचित तथा अनुकूल स्थितियों का अधिकार दिया गया। इसी प्रकार अनुच्छेद 9 में सामाजिक सुरक्षा का अधिकार, अनुच्छेद 10 में मातृत्व तथा बाल्यावस्था, विवाह तथा कुटुम्ब से संबंधित अधिकार प्रदान किया गया। इसी प्रसंविदा के अनुच्छेद 12 में शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के अधिकार को उल्लिखित किया गया है।**

यहाँ पर यह उल्लेखनीय है कि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इन्हें रूढ़िगत अंतर्राष्ट्रीय विधि का दर्जा प्राप्त है। इनके क्रियान्वयन के लिए किसी ठोस तंत्र का विकास अभी तक नहीं हो पाया है।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में स्वास्थ्य के अधिकार की विधिक स्थिति

भारत ने अंतर्राष्ट्रीय सिविल एवं राजनैतिक अधिकार प्रसंविदा तथा अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकार प्रसंविदा 1966 का अनुसमर्थन 27 मई, 1979 में किया। अनुसमर्थन द्वारा भारत ने अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर आबद्ध होने के लिए अपनी सहमति प्रदान की है। इनको भारतीय संदर्भ में लागू कैसे किया गया है, इसका विवरण अग्रलिखित है।

भारतीय संविधान के भाग 3 द्वारा अंतर्राष्ट्रीय सिविल तथा राजनैतिक प्रसंविदा 1966 के प्रावधानों को सोलह वर्ष पूर्व ही 26 जनवरी, 1950 से लागू कर दिया गया। इसी प्रकार भाग 4 द्वारा संविधान में वर्णित नीति निदेशक तत्वों के माध्यम से अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकार प्रसंविदा 1966 को प्रवर्तित कर दिया गया।

स्वास्थ्य के अधिकार के संदर्भ में उल्लेखनीय है कि इसे संविधान के भाग 4 के नीति निदेशक तत्वों के माध्यम से लागू करवाया जायेगा जो कि भाग 3 में वर्णित मूल अधिकारों की तरह न्यायालय द्वारा राज्य के विरूद्ध न्यायालय के समक्ष प्रवर्तनीय नहीं है।

स्वास्थ्य के अधिकार का औचित्य

मिनर्वा मिल्स मामले के निर्णय में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि निदेशक सिद्धांत यद्यपि न्यायालयों के समक्ष प्रवर्तनीय नहीं है, फिर भी उन्हें मूल अधिकारों से कमतर करके नहीं आंकना चाहिए। इसी प्रकार केशवानंद भारती मामले के निर्णय में न्यायमूर्ति चन्द्रचूड़ महोदय ने प्रेक्षण किया कि दोनों मिलकर संविधान की आत्मा का निर्माण करते हैं। नीति निदेशक तत्वों के अंतर्गत अनुच्छेद 42 में सुरक्षित और अनुकूल दशायें तथा प्रसूति सुविधा का प्रावधान है। कार्य की मानवोचित दशायें अनुच्छेद 43 में वर्णित है तथा जीवन का उपयुक्त स्तर अनुच्छेद 47 में वर्णित है।

चमेली सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य के मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा यह निर्णय किया गया कि जीवित रहने के अधिकार में भोजन, जल, बढ़िया वातावरण, शिक्षा, चिकित्सकीय सुरक्षा तथा आश्रय विवक्षित है। जीवित रहने के लिए पर्याप्त स्थान, सुरक्षा, बढ़िया निर्माण, स्वच्छ और बढ़िया वातावरण, पर्याप्त प्रकाश, शुद्ध वायु तथा जल, विद्युत, सफाई तथा अन्य सिविल सुविधायें भी सम्मिलित हैं।

भारतीय संविधान के भाग 3 के मूल अधिकारों में प्राण एवं दैहिक स्वतंत्रता की विस्तृत व्याख्या करते हुए स्वास्थ्य को भी मूल अधिकारों के तहत सम्मिलित किया गया है। पर्यावरण संरक्षण हेतु सरकारों को इसी अधिकार के तहत सक्रिय किया गया है।

स्वास्थ्य के अधिकार हेतु सरकारी प्रयास

यह सुखद बात है कि सरकार द्वारा **खाद्य सुरक्षा कानून, शिक्षा का अधिकार, काम का अधिकार तथा सूचना का अधिकार** पर सबसे ज्यादा ध्यान दिया जा रहा है। इन चारों स्तम्भों से लोकतंत्र तो सुदृढ़ हो रहा है साथ ही **सरकार द्वारा समावेशी विकास के चार स्तम्भों भोजन, स्वास्थ्य, शिक्षा और रोजगार को मजबूत करने की दिशा में सार्थक कदम उठाये जा रहे हैं।** इस प्रकार चारों स्तम्भों के लिए नींव मजबूत करने के उद्देश्य से सरकारी मशीनरी तथा आम लोगों में जिम्मेदारी, जवाबदेही, भागीदारी तथा जानकारी को जमीनी स्तर पर उतारा जा रहा है।

सरकार स्वास्थ्य ढ़ाँचे की बदहाली को लेकर अत्यंत चिंतित है। हाल में विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा जारी आंकड़ों के अनुसार स्वास्थ्य पर सार्वजनिक खर्च के मामले में भारत का स्थान 175 देशों में 171वाँ है। इसी रिपोर्ट में बताया गया है कि भारत में स्वास्थ्य पर किया जानेवाला कुल खर्च जी.डी.पी. का 4.3 प्रतिशत है, लेकिन इसमें बहुचर्चित राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन का खर्च भी शामिल है। इसी कारण सरकार अब दूसरी ओर से सोचना शुरू कर रही है। **सरकार खाद्य सुरक्षा कानून के द्वारा सक्रिय और स्वस्थ जीवन, जो कि गरिमापूर्ण भी हो, को प्रदान करने के लिए सुरक्षित तथा पोषक भोजन तक पहुँच सुनिश्चित करना चाहती है ताकि स्वास्थ्य का अधिकार अपने नागिरकों को प्रदान कर सके।** धारणीय खाद्य सुरक्षा के तहत संतुलित आहार तक किसी परिवार के सदस्यों की भौतिक और आर्थिक पहुँच सुनिश्चित करना है जिसमें सूक्ष्म पोषक तत्व, सुरक्षित पेय जल, पर्यावरणीय सुरक्षा, आधारभूत स्वास्थ्य देखभाल तथा प्राथमिक शिक्षा शामिल है। इस प्रकार भोजन का अधिकार प्रदान करके सरकार संविधान के मूल अधिकार को क्रियान्वित करने की दिशा में कदम उठा रही है।

स्वास्थ्य के अधिकार का दूसरा पक्ष **राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन** के जरिए क्रियान्वित किया जा रहा है। पिछले 60 वर्षों में भारत में प्राथमिक स्वास्थ्य की दिशा में उल्लेखनीय सुधार हुआ है। राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन की तीसरी समीक्षा रिपोर्ट के अनुसार पाँच लाख से भी अधिक आशा (ASHA) कार्यकत्रियाँ ग्रामीण परिवारों को स्वास्थ्य सुविधाएँ मुहैया कराने के लिए कटिबद्ध हैं, जिनमें से 2.25 लाख औषधि किट से लैस हैं। इसी प्रकार 2.28 लाख ग्रामीण स्वास्थ्य एवं स्वच्छता समितियों मे कार्यरत हैं। 1.41 लाख स्वास्थ्य उप-केन्द्र में कार्यरत हैं। पिछले दो वर्षों के भीतर लगभग 70 लाख ग्रामीण स्वास्थ्य एवं पोषण दिवसों का आयोजन किया गया। देश के 189 जिलों में मोबाइल मेडिकल इकाइयाँ कार्यशील हैं। टीकाकरण में रिकार्ड कायम किये गये। स्कूल स्वास्थ्य कार्यक्रमों को लागू किया गया। प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों के माध्यम से सार्वजनिक स्वास्थ्य का नेटवर्क सा बन गया है। उपर्युक्त आंकड़ों से स्पष्ट हो रहा है कि ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन 'स्वस्थ भारत की ओर के नारे' को बुलन्द कर रहा है। स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय के अनुसार 227 अभिनव योजनायें राज्य सरकारों तथा केन्द्र शासित क्षेत्रों मे क्रियान्वित की जा रही हैं। इनमें से 20 नव प्रवर्तनकारी योजनाओं की समीक्षा करके दुबारा लागू करने के लिए कार्य योजना तैयार की जा रही है। उपरोक्त स्थिति मिशन की सफलता का द्योतक है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि स्वास्थ्य का अधिकार अपने नागरिकों को प्रदान करने के लिए सरकार कटिबद्ध है तथा इस दिशा में बदलते सामाजिक-आर्थिक परिदृश्य और विकास के लिए, नया आधारभूत ढ़ाँचा खड़ा करने के समन्वित एवं सफल प्रयासों के कारण, आज हम स्वास्थ्य के क्षेत्र में अपनी उपलब्धियों पर गौरव का अनुभव कर सकते हैं।

संदर्भः

1. द हिन्दू, 22 एवं 27 अगस्त, 2009 तथा 30 जून, 2009
2. नवभारत टाइम्स, 18 अप्रैल, 2010
3. हिन्दुस्तान, 18 अगस्त, 2009
4. डॉ. एच. ओ. अग्रवाल - अंतर्राष्ट्रीय विधि एवं मानवाधिकार सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन, इलाहाबाद, नवाँ संस्करण, 2006.
5. एन वी परांजपे, विधिशास्त्र एवं विधि के सिद्धांत, सेन्ट्रल लाँ ऐजेन्सी, 15वाँ संस्करण 2010
6. मिनर्वा मिल्स बनाम भारत संघ AIR 1980 SC 1789
7. केशवानन्द भारती बनाम केरल राज्य (1973) & SC 225
8. मेनका गाँधी बनाम भारत संघ, AIR 1978 SC 597
9. चमेली सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (1966) 2 SC 549
10. डॉ. वाई. एल. टेखरे - मानव अधिकार और स्वास्थ्य, 'धारणा' अंक 13, मार्च, 2008.
11. राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशनः तीसरी आम समीक्षा मिशन रिपोर्ट, नवम्बर 2009,
12. स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार

हरियाणा राज्य में ग्रामीण स्वास्थ्य एवं प्रशासन

सुखदेव कुमार*

भारत गाँवों का देश है। जिसकी लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या गाँवों में रहती है। गाँवों की खुशहाली से ही देश की खुशहाली सम्भव है। आज आधुनिक भारत कई मायनों में प्रगतिशील है। 1970 के दशक की हरित क्रांति फिर उसके बाद दुग्ध क्रांति, 1991 की नई आर्थिक नीति के फलस्वरूप उद्योगों का विकास, देश की सुदृढ़ होती आर्थिक स्थिति, सूचना एवं प्रौद्योगिकी क्रांति और अब भारतीय बहुराष्ट्रीय कंपनियों के बढ़ते कदम विकासशील भारत के विकसित देश बनने की ओर अग्रसर होने का संकेत है। किंतु, जहाँ एक तरफ शहरी भारत तीव्र गति से विकास कर रहा है, वहीं दूसरी तरफ ग्रामीण भारत में गरीबी, अशिक्षा, बेरोजगारी, स्वास्थ्य एवं स्वच्छता का अभाव, कुपोषण, सुरक्षित एवं पर्याप्त पेयजल की कमी आदि समस्याएँ विकराल रूप धारण किए हुए हैं।

स्वास्थ्य मानव जीवन की एक अनमोल सम्पत्ति है। मनुष्य के जीवन और उसकी खुशी के लिए स्वास्थ्य से ज्यादा महत्वपूर्ण किसी अन्य वस्तु की कल्पना करना कठिन है। स्वास्थ्य किसी भी समाज की आर्थिक प्रगति के लिए अनिवार्य है। जो भी व्यक्ति अथवा समाज स्वास्थ्य की दृष्टि से पिछड़ा हुआ है वह न केवल सम्पन्नता की दृष्टि से पिछड़ जाएगा बल्कि ऐसे समाज में जीवन मूल्यों की स्थापना करना भी बेहद कठिन है। अच्छे स्वास्थ्य के अभाव में व्यक्ति और व्यक्तियों से निर्मित समाज अपने गुणों के अनुरूप सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करने में सक्षम नहीं हो पाते हैं। मानव जीवन में स्वास्थ्य के इसी महत्व को स्वीकारते हुए, इसे राज्य सूची में शामिल किया गया है। यहाँ राज्य का यह दायित्व है कि सार्वभौम स्वास्थ्य सेवाओं तक सबकी पहुँच हो तथा भुगतान असमर्थता की वजह से किसी को भी स्वास्थ्य सेवाओं से वंचित न होना पड़े।

आजादी से पहले देश के ग्रामीण क्षेत्रों में प्रतिवर्ष संक्रामक रोगों से करीब 13 लाख लोग काल कवलित हो जाते थे। आजाद भारत में गांवों के स्वास्थ्य परिदृश्य में काफी सुधार हुआ है। हालांकि अभी भी इस दिशा में बहुत कुछ किया जाना बाकी है। इसमें कोई शक नहीं है कि पहले गांवों में निरक्षरता और अंधविश्वास के चलते बहुत लोग मौत के मुँह में समा जाते थे लेकिन अब स्थिति पहले जैसी नहीं है। गांवों में शिक्षा के प्रचार-प्रसार से ग्रामीण लोगों में अंधविश्वास कम हुए हैं। सरकारी योजनाओं के प्रचार-प्रसार का भी सकारात्मक प्रभाव पड़ा है।

स्वास्थ्य मानव विकास का एक महत्वपूर्ण सूचकांक है। बिना स्वस्थ जनसंख्या के देश का आर्थिक एवं औद्योगिक विकास असंभव है। स्वस्थ जनसंख्या कई सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक रूप से उत्तम सूचकांकों का प्रदर्शन करता है व सकल विश्व के युग निर्माण को दिशा प्रदान करता है। यही कारण है कि स्वास्थ्य नीति आज हमारे देश की एक महत्वपूर्ण नीति है और पंचवर्षीय योजनाओं का प्रमुख हिस्सा है। आज हमारे देश में स्वास्थ्य सेवाओं का अभाव नहीं है बल्कि उसका सही तरीके से कार्यान्वयन व सभी व्यक्तियों की इन सेवाओं तक पहुंच एक

* शोध छात्र, लोक प्रशासन विभाग, कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरूक्षेत्र, हरियाणा

अहम् चुनौती है जिसे अच्छे स्वास्थ्य प्रशासन से ही पूरा किया जा सकता है। इसके लिए हमें स्वास्थ्य प्रशासन की अवधारणा को समझना होगा -

1. ऑक्सफोर्ड अंग्रेजी शब्दकोश के अनुसार - ''स्वास्थ्य का अर्थ है मस्तिष्क एवं शरीर का सही स्थिति में रहना जिससे कि व्यक्ति अपनी भूमिका का ठीक प्रकार से निर्वाह कर सके।''
2. परकिन्स के अनुसार - ''स्वास्थ्य शरीर की वह गतिशीलता है जिससे शरीर विभिन्न प्रतिकात्मक प्रभावों के अनुकूल बनने का प्रयास करता है।''
3. विश्व स्वास्थ्य संगठन के संविधान (1948) की प्रस्तावना के अनुसार स्वास्थ्य का अर्थ ''व्यक्ति की पूर्ण शारीरिक, मानसिक व सामाजिक श्रेष्ठ स्थिति से है, न कि सिर्फ व्याधियों अथवा अपंगता की अनुपस्थिति से।''

हरियाणा के ग्रामीण क्षेत्रों में उपलब्ध स्वास्थ्य कार्यक्रमः

हरियाणा राज्य में ग्रामीण स्वास्थ्य प्रशासन ने अनेक स्वास्थ्य कार्यक्रमों को चलाया है ताकि नागरिकों के स्वास्थ्य का विकास एवं विस्तार हो सके -

- राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन
- समग्र प्रजनन एवं शिशु स्वास्थ्य कार्यक्रम-2
- लाडली
- जननी सुरक्षा योजना
- आशा
- विकल्प
- राष्ट्रीय टीकाकरण कार्यक्रम
- राष्ट्रीय टी.वी. नियंत्रण कार्यक्रम
- राष्ट्रीय कुष्ठ उन्मूलन
- स्वास्थ्य जागरूकता कार्यक्रम
- स्कूल स्वास्थ्य कार्यक्रम
- स्वास्थ्य बीमा कार्यक्रम
- राष्ट्रीय अंधता नियंत्रण कार्यक्रम
- परिवार कल्याण कार्यक्रम
- हरियाणा में एड्स नियंत्रण कार्यक्रम

हरियाणा के ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता को सुनिश्चित करने हेतु विभिन्न स्वास्थ्य इकाईयाँ कार्यरत हैं जिसके बारे में विस्तृत जानकारी तालिका 1.1 में दी गई है-

तालिका 1.1 ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाओं की स्थिति

	उपकेन्द्र	प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र	सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र
कर्मचारी	एक पुरूष स्वास्थ्य कार्यकर्ता तथा एक महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता	एक चिकित्सा अधिकारी, सामुदायिक स्वास्थ्य अधिकारी, एक स्वास्थ्य शिक्षा एवं सूचना अधिकारी, स्वास्थ्य सहायक (महिला व पुरूष), दवा विशेषज्ञ, नर्स तथा अन्य कर्मचारी	8 विशेषज्ञ (त्वचा, नेत्र, दन्त, महिला प्रसव, सर्जरी, हृदय रोग, बाल रोग, हड्डी रोग विशेषज्ञ, दो दवा विशेषज्ञ, स्टाफ नर्स तथा अन्य कर्मचारी)
सुविधाएँ	सरकार द्वारा उपलब्ध कराई गई किट-ए व किट-बी की व्यवस्था तथा एक बिस्तर की व्यवस्था	4-6 बिस्तरों की व्यवस्था तथा प्रयोगशाला की सुविधा	30 बिस्तरों की व्यवस्था, ऑपरेशन थियेटर तथा रोगी वाहन (एम्बुलेंस, एक्स-रे तथा पैथोलॉजी)

विभिन्न केन्द्रों के माध्यम से स्वास्थ्य सुविधाएँ उपलब्ध कराये जाने के बावजूद आज भी ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाओं की स्थिति बहुत अच्छी नहीं है। इसके लिए निम्नलिखित कारण उत्तरदायी हैं-

- ग्रामीण क्षेत्रों में प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता को सुनिश्चित करने हेतु प्रशिक्षित डाक्टरों का अभाव है, क्योंकि ज्यादातर चिकित्सक अपनी सुख-सुविधाओं हेतु ग्रामीण क्षेत्रों में कार्य नहीं करना चाहते हैं। इसके कारण ग्रामीण क्षेत्रों में चिकित्सक-रोगी का अनुपात बिगड़ जाता है। इसके अतिरिक्त जो डाक्टर व कर्मचारी ग्रामीण क्षेत्रों में कार्यरत हैं वे पूरे मनोयोग से कार्य न करके लापरवाही करते हैं।
- सरकार द्वारा बनाए गए स्वास्थ्य उपकेन्द्रों से ग्रामीणों को स्वास्थ्य का लाभ न के बराबर मिलता है। क्योंकि वहाँ पर किसी डॉक्टर की व अन्य अधिकारियों की पर्याप्त सुविधा नहीं है और न ही दवाईयों की संतुलित व्यवस्था होती है। गांवों में स्वास्थ्य उपकेन्द्र सरकार के लिए सफेद हाथी बने हुए हैं, जिस पर फिजूल खर्च होता है।
- राज्य सरकार द्वारा ग्रामीण स्वास्थ्य के लिए उचित बजट की व्यवस्था नहीं होती है जो बजट मिलता है उस पर भ्रष्टाचार की दीमक लग जाती है। इस प्रकार की स्थिति से निपटने हेतु अभी हाल में सरकार द्वारा राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के तहत 'कम्युनिटी मॉनिटरिंग' लागू करने की बात चल रही है। इसके तहत गांव की स्वास्थ्य सेवाओं का ढाँचा सुधारने के लिए स्थानीय नागरिकों की सहायता लेने का प्रावधान किया गया है। 'कम्युनिटी मॉनिटरिंग'के तहत गांव के प्रबुद्ध नागरिकों के द्वारा अपने निकट के चिकित्सा केंद्रों पर दवाओं की उपलब्धता एवं डाक्टरों द्वारा इलाज में की जानेवाली लापरवाही के संबंध में प्रतिदिन रिपोर्ट दी जाएगी। इस रिपोर्ट की समीक्षा करके शासन द्वारा दोषियों के खिलाफ कार्यवाही की जाएगी।

ग्रामीण क्षेत्रों में संसाधनों की कमी की वजह से प्राथमिक स्वास्थ्य हेतु ढाँचागत सुविधाओं जैसे - भवनों, कर्मचारियों व रखरखाव का अभाव दिखाई पड़ता है। 2001 के जनसंख्या मानक के अनुसार अब भी हरियाणा राज्य में उपकेन्द्रों, प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों, सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्रों की कमी है। अतः ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक रूप से कमजोर लोगों तक बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएँ उपलब्ध कराना एक बड़ी चुनौती है। ऐसी स्थिति में यह चुनौती और बढ़ जाती है, जो तालिका 1.2 में देखा जा सकता हैः

तालिका 1.2 आधारभूत स्वास्थ्य ढ़ाँचा

चिकित्सालय	संख्या
उपकेंद्र	1685
प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र	424+17 = 441
सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र	94
औषधालय	125
एडपोस्ट	16
अस्पताल	52

ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सुविधाओं की सुचारू रूप से उपलब्धता न होने के कारण यहाँ के अधिकतर व्यक्ति पारंपरिक उपचार पद्धतियों का सहारा लेते हैं, जिससे ग्रामीणों में रोग की जटिलताएं और बढ़ती जाती हैं। इसी चिंताजनक पहलू को ध्यान में रखते हुए संप्रग सरकार ने ग्रामीण स्वास्थ्य सुविधाओं के व्यापक प्रसार हेतु अपने बजट 2008-09 में 16,534 करोड़ रूपये स्वास्थ्य क्षेत्र में आवंटित किए हैं। यह राशि पिछले बजट की तुलना में 15% अधिक है। स्वास्थ्य क्षेत्र में भविष्य की चुनौतियों को देखते हुए यह वृद्धि अपरिहार्य थी। सरकार द्वारा पूर्व के वर्षों में किये गये प्रयासों से शहरी स्वास्थ्य सेवाओं में सुधार देखा गया है, किंतु ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाओं का हाल अभी भी चिंताजनक स्थिति में है। इसलिए इस बार स्वास्थ्य परियोजनाओं के लिए आवंटित धनराशि में से 12,050 करोड़ रूपये राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के तहत खर्च किया जाना है।

हरियाणा में ग्रामीण स्वास्थ्य प्रशासन को सुदृढ़ करने के लिए निम्नलिखित सुझाव दिए जा सकते हैं-

- ग्रामीण स्वास्थ्य प्रशासन को सुधारने के लिए सबसे पहले राजनैतिक प्रतिबद्धता का होना अनिवार्य है।
- जन स्वास्थ्य योजनाओं और कार्यक्रमों को बनाते समय प्रशासनिक अधिकारियों को यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि इन कार्यक्रमों का फायदा उठाने के लिए ग्रामीणों को ज्यादा प्रशासनिक मुश्किलों से न गुजरना पड़े।
- योजनाओं और कार्यक्रमों को आम ग्रामीणों तक पहुंचाने के लिए अच्छे प्रचार-प्रसार की

व्यवस्था करनी चाहिए। गांवों के अंदर बड़े-बड़े स्वास्थ्य कार्यक्रमों से संबंधित बैनर लगाए जाने चाहिए और स्कूलों में अध्यापकों के माध्यम से बच्चों को भी स्वास्थ्य कार्यक्रमों के बारे में बताया जाना चाहिए, ताकि वे बच्चे घर जाकर अपने माता-पिता को स्वास्थ्य कार्यक्रमों के बारे में बता सकें।

- डॉक्टरों को ग्रामीण परिवेश में कुछ ऐसी सुविधाएँ प्रदान करनी चाहिए जो शहरों के स्वास्थ्य केंद्रों के अनुरूप हों, जैसे कि अच्छी इमारतों की व्यवस्था, सफाई की व्यवस्था, अच्छे मकान की व्यवस्था, पानी की व्यवस्था तथा बिजली की व्यवस्था इत्यादि। स्वास्थ्यकर्मी ग्रामीणों की अज्ञानता का फायदा उठाने की कोशिश करते हैं, अतः स्वास्थ्य कर्मियों पर कड़ा नियंत्रण होना चाहिए। इसके लिए उच्च अधिकारियों का इन स्वास्थ्य केन्द्रों का नियमित दौरा व निरीक्षण होना चाहिए।
- सरकार को ग्रामीण परिवेश में सेवा करने वाले डॉक्टरों व स्वास्थ्यकर्मियों को विशेष प्रशिक्षण देने की व्यवस्था करनी चाहिए और इस प्रशिक्षण के दौरान डॉक्टरों व स्वास्थ्य कर्मियों द्वारा ग्रामीणों की स्वास्थ्य कार्यक्रमों में भागीदारी को सुनिश्चित करने के तरीके सिखाये जाने चाहिए। इसके अलावा ग्रामीण क्षेत्रों में प्रयोगात्मक प्रशिक्षण की व्यवस्था करनी चाहिए।
- ग्रामीण स्वास्थ्य केन्द्रों में बहुत सारे पद रिक्त पड़े रहते हैं। इन पदों पर तुरंत भर्ती की जानी चाहिए।
- योजनाओं व कार्यक्रमों की सफलता के लिए पर्याप्त वित्त का होना अनिवार्य है। सरकार को कोई भी कार्यक्रम शुरू करने से पहले उचित धन की व्यवस्था कर लेनी चाहिए।
- ग्रामीण स्वास्थ्य प्रशासन के अधिकारियों व कर्मचारियों को लोकतंत्र की आवाज को समझना चाहिए। उनको अपना नौकरशाही व्यवहार बदलकर मानवीय व्यवहार की प्रणाली को अपनाना चाहिए। कर्मचारियों को बिना किसी भेदभाव से ग्रामीणों के साथ अच्छा व्यवहार करना चाहिए ताकि वे सरकार द्वारा चलाई जा रही स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सेवाओं का लाभ प्राप्त कर सकें। स्वास्थ्य कर्मचारियों को जनता तथा सरकार के प्रति अपने उत्तरदायित्वों का पूरा एहसास होना चाहिए ।

संदर्भ सूचीः

1. मीना, आर.एस., 2003 'ग्रामीण क्षेत्रों में प्राथमिक स्वास्थ्य सुविधाएँ', कुरूक्षेत्र, 48(7), पृ.सं. 43-46.
2. फारूकी, उमर, 2010 'ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाओं के बदलते आयाम' कुरूक्षेत्र, 48(माघ-फाल्गुन), पृ.सं. 3-7.
3. कुमार सुखदेव, 2007 'ग्रामीण स्वास्थ्य एवं प्रशासनः जीन्द जिले का अध्ययन, कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरूक्षेत्र, पृ.सं. 1.
4. वही, पृ.सं. 52-62
5. यादव, विजय कुमार, 2008 'भारत में ग्रामीण स्वास्थ्य परिदृश्य' कुरूक्षेत्र, 54(12), पृ.सं.7-9
6. कुमार सुखदेव, 2007 'ग्रामीण स्वास्थ्य एवं प्रशासनः जीन्द जिले का अध्ययन, कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरूक्षेत्र, पृ.सं. 99-102

कैल्शियम से जुड़ा है - हड्डियों का स्वास्थ्य

प्रो. जे.के. दास*
मनीषा**

हमारे शरीर में हड्डियों का आधारभूत महत्व है, ये हड्डियां विभिन्न प्रकार की कोशिकाओं से निर्मित होती हैं। इन कोशिकाओं को मजबूत करने के लिए कैल्शियम की आवश्यकता पड़ती है। हमारे शरीर की बनावट या संरचना मुख्यतः हड्डियों के आधार पर है, अतः इनका सही रुप और समय - समय पर यथोचित विकास होना अति आवश्यक है। हमारे शरीर की मुख्य संरचना, हड्डी की तुलना एक कार चेसिस से की जा सकती है। यदि यह कमजोर होता है तो हम कई स्वास्थ्य समस्याओं के शिकार हो जाते हैं। हड्डियों के कमजोर होने पर हमारी कार्यक्षमता में भी कमी आ जाती है।

हड्डियों का विकास मुख्य रूप से इस बात पर निर्भर करता है कि हमारे शरीर को कैल्शियम की कितनी मात्रा प्राप्त होती है। हमारे शरीर को सामान्य रुप से कार्य करने के लिए पोटेशियम कैल्शियम, फास्फोरस, क्लोराइड, सल्फर मैग्नीशियम की अधिक मात्रा तथा अन्य खनिज लवणों (आयरन, जिंक, कापर, आयोडीन, सिलेनियम, कोबाल्ट) की तुलना में सूक्ष्म मात्रा की आवश्यकता होती है। हमारे शरीर में कैल्शियम की मात्रा अन्य लवणों के मुकाबले सबसे अधिक है। यह शरीर का लगभग 2 प्रतिशत भाग बनाता है। कैल्शियम न केवल हमारे शरीर की हड्डियों को मजबूती प्रदान करता है बल्कि हमारे दाँतों की मजबूती भी कैल्शियम पर ही निर्भर करती है। इसकी कमी से दाँतों में डिकेस और कैरिटिश बढ़ सकती है। हमारे शरीर में कुल कैल्शियम का करीब 99 प्रतिशत हड्डियों और दाँतों में तथा शेष एक प्रतिशत अन्य ऊतकों और रक्त में होता है।

सामान्यतः रक्त में कैल्शियम की मात्रा 8.5 प्रतिशत से 10.5 प्रतिशत मिलीग्राम प्रति 100 मिलीलिटर होती है। शारीरिक स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिए रक्त कैल्शियम का सामान्य बना रहना अति आवश्यक है। हमारे शरीर में रक्त कैल्शियम और कुल कैल्शियम को विटामिन डी " पैराथायराइड हार्मोन और कौल्सीटोनिन हार्मोन'' द्वारा नियंत्रित किया जाता है। रक्त कैल्शियम का बढना या घटना दोनों ही घातक होते हैं।

कार्य - हमारे शरीर में कैल्शियम का उपयोग निम्न कार्यों में होता हैः

(i) फास्फोरस के साथ अस्थि तथा दांतों के निर्माण के लिए।
(ii) तंत्रिका केन्द्रों तथा तंत्रिका तंतुओं के आदेशों के नियमन के लिए।
(iii) स्नायुओं के सामान्य कार्य, ह्दय के संकुचन, रक्त थक्का करने, कोशिकाओं की झिल्ली के संदेश कोशिकाओं तक पहुँचाकर इनके कार्यों को नियंत्रित करने के लिए।

* विभागाध्यक्ष, एपीडेमियोलॉजी विभाग एवं डीन , राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण संस्थान, नई दिल्ली।
** सहायक अनुसंधान अधिकारी, एपीडेमियोलॉजी विभाग, राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण संस्थान, नई दिल्ली।

(iv) हाथ कटने या घाव होने पर बहते खून को बंद करने के लिए।

(v) आमाशय में दूध की प्रोटीन को कैल्शियम के सीनोजन में परिवर्तित कर एंजाइमों की क्रियाशीलता के लिए।

कैल्शियम की कुल शारीरिक आवश्यकता

हमारे शरीर को सुचारु रुप से कार्य करने हेतु आवश्यक कैल्शियम की मात्रा को निम्नलिखित तालिका (i) में दर्शाया गया हैः-

तालिका - 1

श्रेणी	आयु (वर्ष)	कैल्शियम (एम. जी.)
बच्चे	0 - 1 वर्ष	500 - 600
	1 - 3	500
	4 - 8	700
लड़कियाँ	9 - 11	1000
	12 - 18	1300
महिलाएँ	19 - 50	1000
	> 50	1300
गर्भावस्था/ स्तनपान	14 - 18	1300
	19 - 30	1000
	31 - 50	1000
लड़के	9 - 11	1000
	12 - 18	1300
पुरुष	19 - 70	1000
	> 70	1300

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि किशोरावस्था, गर्भावस्था तथा स्तनपान कराने वाली माताओं तथा 50 वर्ष से अधिक महिलाओं को कैल्शियम की आवश्यकता अन्य श्रेणी की तुलना में अधिक होती है। इसका कारण यह है कि किशोरों की हड्डियों की बढोतरी अति तीव्र गति से होती है। यदि इस समय इन्हें पर्याप्त मात्रा में कैल्शियम मिलता है तो इससे उनकी हड्डियाँ मजबूत बनेगी तथा उनमें सुदृढता आएगी। गर्भवती या स्तनपान कराने वाली माताओं

तथा बच्चों में इसकी विशेष महत्ता है। क्योंकि गर्भावस्था के दौरान भ्रूण स्वयं के लिए कैल्शियम, माँ की हड्डियों से प्राप्त करता है इसलिए माँ को न केवल स्वयं के लिए परन्तु शिशु की मजबूत हड्डियों के लिए भी पर्याप्त मात्रा में कैल्शियम लेने की आवश्यकता होती है। स्तनपान कराने वाली माताएं भी अपने दूध के माध्यम से ही नवजात शिशु को कैल्शियम प्रदान करतीं हैं। अतः माँ को इतना कैल्शियम लेना चाहिए जिससे कि न तो उसे और न ही उसके नवजात शिशु को कैल्शियम की कोई कमी हो। प्रसव के पश्चात मान्यता है कि माँ को गरम रखो, क्योंकि हवा लगने से उसकी हड्डियों में दर्द बैठ जाएगा। इसलिए कहा जाता है कि माँ को कैल्शियम से भरपूर अर्थात दूध, दही, छाछ, पनीर, तिल, मूंगफली, चना आदि इतना अधिक खिलाओ कि हड्डियाँ इतनी मजबूत बने कि हवा लगने पर भी उनमें दर्द न हो। यहाँ यह अपरिहार्य है कि हम कैल्शियम के बारे में अधिक जानें।

कैल्शियम को मुख्य रुप से तीन नामों से जाना जाता हैः-

1. **कैल्शियम साइट्रेट मैलेट (Malate) -** कैल्शियम का सबसे अधिक अवशोष्य (Absorbable) रुप माना जाता है। यह साइट्रिक एसिट तथा मैलिक (सेब) एसिट के संयोजन से कैल्शियम अवशोषण में प्रयोग किया जाता है। इसके प्रयोग से आस्टेपोसिस(Osteoposis) को रोका जा सकता है। 50 वर्ष से अधिक आयु वर्ग में यह कैल्शियम सप्लीमेंट लेने से ठीक किया ज सकता है।

2. **कैल्शियम कार्बोनेट**- इसे एक पूरक के रुप में प्रयोग में लाया जा सकता है। यह बाजार में कैप्सूल तथा गोलियों के रुप में उपलब्ध है। इसे बेहतर अवशोषण के लिए भोजन के बाद लिया जाता है। इसे भी प्रतिअम्ल(antiacid) के रुप में प्रयोग किया जाता है। इसका प्रयोग उचित मात्रा में ही किया जाना चाहिए। उचित मात्रा में न लेने पर हाइपरकैल्शिमीया (hypercalcemia) उल्टी की स्थिति उत्पन्न हो सकती है।

3. **कैल्शियम साइट्रेट** - कैल्शियम साइट्रेट पेट में अम्ल को कम करने के लिए कैल्शियम अवशोषण को बेहतर बनाने में मदद करता है। यह खाना खाने के स्वाद को बढ़ाने तथा बढ़ाए रखने में सहायक होता है। यह नींबू के खट्टे फल से प्राप्त एसिड के कैल्शियम संयोजन से अर्जित प्रकार है।

कैल्शियम के स्त्रोत - दूध तथा दूध से बने पदार्थ, हरी सब्जियाँ, फल, मांस, साबुत दालें जैसे - चने, राजमा, मोठ, सोयाबीन, मेवे इत्यादि कैल्शियम प्राप्ति के मुख्य स्त्रोत हैं। दूध तथा दूध से बने पदार्थों में कैल्शियम प्रचुर मात्रा में विद्यमान रहता है। साथ ही इस कैल्शियम का अवशोषण भी आंतों से बेहतर ढंग से होता है। परन्तु रेशेयुक्त भोजन में कुछ ऐसे बाधक पदार्थ पाए जातें हैं कि शरीर उनके कैल्शियम का पूर्ण उपयोग नहीं कर पाता। क्योंकि इनमें मौजूद "आग्जैलिक एसिड" के कारण कैल्शियम का अवशोषण आंतों द्वारा सुचारु रुप से नहीं हो पाता। ऐसी अवस्था में जितना अधिक कैल्शियम लेंगे, उतनी आवश्यक मात्रा शरीर में जाएगी।

तालिका - 2

खाद्य स्त्रोत	अनुमानित मात्रा	कैल्शियम (एम. जी.)
नियमित रुप से दूध	1 कप (250 एमएल)	285
मलाई निकाला दूध	1 कप (250 एमएल)	310
प्राकृतिक दही	200 ग्राम	340
पनीर	40 ग्राम	310
मैदा की रोटी (ब्रैड)	1 टुकड़ा	15
हरी पत्तेदार सब्जी	100 ग्राम	340
पकाया हुआ पालक	1 कप (340 ग्राम)	170
पकाया हुआ ब्रोकोली	1 कप (100 ग्राम)	30
बादाम	15	50
रोटी	6 - 7	1300
दाल	2 कटोरी	60

हमारे भोजन में कुछ ऐसे तत्व होते हैं जिनकी मदद से कैल्शियम का अवशोषण सहज हो जाता है। जैसे - विटामिन डी, प्रोटीन, विटामिन सी। हमारे शरीर में विटामिन डी, कैल्शियम युक्त एक प्रोटीन को आंत में बनाए रखता है। यह प्रोटीन कैल्शियम के शोषण में सहायक होता है। यह हड्डियों के कैल्सीकरण (कैल्शियम की मात्रा पहुंचाने) में भी मदद करता है। हमारे शरीर में कैल्शियम की जो मात्रा पचा ली जाती है वह मल - मूत्र के साथ बाहर निकल जाती है। परन्तु भोजन में व्याप्त कुछ तत्व जैसे 'ओक्जेलेट', 'कोका' आदि कैल्शियम के अवशोषण में बाधा डालते हैं। गेहूँ में मौजूद कैल्शियम का अवशोषण भी फाइटेट की उपस्थिति के कारण बाधित होता है। खाए जाने वाले पान में चूना पर्याप्त मात्रा में होना, कैल्शियम की आपूर्ति में सहायक होता है। खाने के साथ - साथ चाय या कृत्रिम पेय पदार्थ जैसे कोला आदि पीने से भी कैल्शियम शरीर को प्राप्त नहीं होता। अतः खाने के साथ इनका सेवन कदापि नहीं करना चाहिए।

कैल्शियम की कमी से स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव

- बाल्यावस्था में कैल्शियम की कमी से "रिकेट्स" रोग हो सकता है। इससे बच्चों का विकास मंद गति से होता है तथा रोग प्रतिरोधक क्षमता भी कम हो जाती है। कैल्शियम की कमी से हड्डियों में वक्रता आकर वे टेढी हो सकती है। ऐसे समय में यदि सही रुप से उपचार न किया जाए तो वे स्थायी रुप से विकृत हो सकती हैं।

- युवावस्था में कैल्शियम और विटामिन डी की कमी से टिटेनी और आस्टियोमलेशिया रोग हो

सकते हैं। टिटेनी रोग पैराथॉयराइड हार्मोन, विटामिन 'डी' की कमी, शरीर की क्षारीयता में वृद्धि तथा लगातार उल्टी होने से हो सकता है। इसमें रक्त का कैल्शियम स्तर, सामान्य स्तर से कम हो जाता है। अंग सुन्न पड़ने लगते हैं तथा हाथ-पैरों में अकड़न आ जाती है।

- प्रौढावस्था में आयु में वृद्धि होने के साथ-साथ हड्डियाँ कमजोर तथा हल्की होने पर दर्द करने लगती हैं। जिन व्यक्तियों के शरीर में कैल्शियम की कमी होती है उनकी हड्डियाँ कमजोरी के कारण जरा सी चोट लगने पर ही टूट सकती हैं। इस रोग को "अस्थिविरलता" (आस्टियोपोरोसिस) के नाम से जाना जाता है।

- कैल्शियम की कमी की वजह से दांतों के कमजोर होकर जल्दी टूटने का डर भी रहता है। इनमें डिकेस (decays) और कैरिटिस (carities) की समस्या उत्पन्न हो सकती है।

- गर्भावस्था तथा स्तनपान कराने वाली माताओं को पर्याप्त मात्रा में कैल्शियम न मिलने पर एक ओर तो शिशु कमजोरी का शिकार होगा, दूसरी ओर कमजोर महिलाएं आगे चलकर रजोनिवृति के पश्चताप वृद्धावस्था में अनेक शारीरिक कष्टों तथा शारीरिक अपंगता का शिकार बन सकती हैं।

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि हमारे शरीर के स्वास्थ्य की दृष्टि से, विशेषकर अस्थियों की सशक्तता हेतु, कैल्शियम की पर्याप्त मात्रा का अवशोषण होना नितांत आवश्यक है। अतः यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि कैल्शियम की उचित मात्रा में आपूर्ति हमारे शरीर को नियमित रुप से होती रहे।

संदर्भ -

1. "कैल्शियम के विभिन्न प्रकार और स्वास्थ्य" विषयक इंटरनेट सामग्री,अप्रैल 2010, पृष्ठ 1 -2
2. पंचायिकाः- अंक 12 दिसम्बर 2004, पृष्ट 25-26, "बच्चों के लिए आवश्यक है कैल्शियम"
3. कुरुक्षेत्र (मनीषा एवं नीलम मकोल):- फरवरी 2006 अंक - 4, पृष्ठ - 46-47 "कैल्शियम की भूमिका अहम"

भूमण्डलीय उष्मीकरण एवं स्वास्थ्य

प्रोफेसर वी.के. तिवारी *
अरविन्द कुमार **

आज पूरे विश्व के समक्ष भूमण्डलीय उष्मीकरण या ग्लोबल वार्मिंग तथा इसके कारण परिवर्तित होते वैश्विक पर्यावरण की चुनौती विद्यमान है। यह एक चुनौती के साथ-साथ, विश्व समुदाय में चिंता का विषय भी बना हुआ है। भूमण्डलीय पर्यावरण तथा इसके इर्द-गिर्द के क्षेत्रों पर उष्मीकरण के प्रतिकूल प्रभाव न केवल जलवायु पर अपितु मानव स्वास्थ्य पर भी शनैः शनैः दृष्टिगोचर हो रहे हैं। समय की गति के साथ-साथ वैश्विक जलवायु में निरन्तर हो रही वृद्धि को भविष्य के लिए एक खतरे का संकेत माना जा रहा है। यह भी संभावना व्यक्त की जा रही है कि यदि विश्व स्तर पर कारगर उपाय नहीं किए गए तो जन-समुदाय सहित अन्य प्राणियों को पेयजल, सांस लेने के लिए स्वच्छ वायु जैसी बुनियादी आवश्यकताएं उपलब्ध नहीं हो पाएंगी। जब जलवायु के यही दो प्रमुख घटक ही मानव को नहीं मिल पाएंगे तो अन्य आवश्यक घटकों की परिकल्पना भी नहीं की जा सकती।

वैश्विक उष्मीकरण क्या है?

भूमण्डलीय अथवा वैश्विक उष्मीकरण (ग्लोबल वार्मिंग) वास्तव में पृथ्वी के समीपवर्ती सतह पर व्याप्त वायुमंडल में 20 वीं शताब्दी के मध्य से औसत तापमान में सतत् वृद्धि का प्रभाव है तथा तत्संबंधी वृद्धि से संबद्ध है। वैश्विक तापमान में वृद्धि के कारण समुद्री जल स्तर में वृद्धि हो सकती है तथा इस परिवर्तन के कारण वायुमंडल तथा रेगिस्तानी क्षेत्रों के तापमान में वृद्धि संभावित है। ग्रीनहाऊस गैसों में परिवर्तन एवं प्रभाव के कारण हिमनद पिघल रहे हैं तथा प्राकृतिक संसाधन सिमट रहे हैं। इस परिदृश्य के परिणामस्वरूप बाढ़ तथा सूखा पड़ने की संभावनाएँ बढ़ गई हैं।

इसके अतिरिक्त भारत सहित अनेक देशों में कृषि योग्य भूमि की कमी होने, कंकरीट के क्षेत्रों में वृद्धि के कारण मत्स्य पालन एवं खाद्यान्न भण्डारों पर प्रतिकूल प्रभाव, समुद्र तटीय क्षेत्रों के क्षरण आदि घटनाओं की आशंकाएं बढ़ रही हैं। वैश्विक स्तर पर हो रहे जलवायु परिवर्तन को विकसित एवं विकासशील देशों के मध्य एक संघर्ष-दृश्य के रूप में देखा जा रहा है। चूंकि, जलवायु परिवर्तन से वैश्विक पर्यावरण संबंधित है और पर्यावरण स्वच्छता अथवा अस्वच्छता दोनों से मानव का स्वास्थ्य संबंधित है, इसलिए इस स्थिति में सुधार लाने के लिए कारगर उपाय किए जाने की आवश्यकता है।

* प्रोफेसर, योजना एवं मूल्यांकन विभाग एवं कार्यवाहक उप निदेशक (प्रशा.), राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण संस्थान, नई दिल्ली।

** हिन्दी अधिकारी, राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण संस्थान, नई दिल्ली।

यह एक यथार्थ स्थिति है कि भूमण्डलीय उष्मीकरण के कारण उपजे जलवायु परिवर्तन, हरितपट्टी गृहों में कार्बन डाईऑक्साइड गैसों के उत्सर्जन के परिणामस्वरूप उत्पन्न चुनौतियाँ किसी एक देश की समस्या नहीं है। इसका सामना अंतर्राष्ट्रीय सहयोग से किया जा सकता है। चूंकि, इसमें मानव स्वास्थ्य तथा भावी संसाधनों का प्रश्न निहित है, इसलिए भूमण्डलीय उष्मीकरण में कमी लाने के प्रति सामुदायिक उत्तरदायित्व समझ कर उपाय करने की आवश्यकता है।

अपरिष्कृत जलवायु के प्रभाव

समूचे विश्व में विगत 50 वर्षों में मानवीय गतिविधियों में औद्योगिक क्रांति के प्रसार के कारण कार्बन डाईऑक्साइड तथा हरितपट्टी गृहों से उत्सर्जित गैसों में भारी वृद्धि हुई है। इसके परिणामस्वरूप जलवायु का तापमान बढ़ा है और ग्लोबल वार्मिंग से समस्त वैश्विक समुदाय त्रस्त हो रहा है।

वैश्विक उष्मीकरण से उभरे पक्ष

- तापमान में वृद्धि के कारण संक्रामक रोगों का खतरा उत्पन्न हुआ है।
- भारी वर्षा, बाढ़, तूफान, भू-स्खलन, ज्वालामुखी फटने आदि की संभावनाओं में वृद्धि।
- तापमान में अति वरीयता के कारण हिट-स्ट्रोक हाइपरथर्मिंग अथवा अति-शीतन, दमा एवं श्वास रोगों में वृद्धि हुई है।
- समुद्री जल स्तर में वृद्धि के कारण नदियों में बाढ़ का खतरा तथा इसके परिणामस्वरूप जन-विस्थापन की समस्या उत्पन्न हुई है।
- विगत एक दशक से वर्षा चक्र तथा ऋतु परिवर्तन के कारण असमय वर्षा होने अथवा बिल्कुल वर्षा न होने की प्रवृत्ति मौसम में उभरी है। इसके परिणामस्वरूप कृषि फसलों का गणित बिगड़ा है, वहीं पेयजल अथवा जल भण्डार का संकट उत्पन्न हुआ है। असुरक्षित पानी का प्रयोग करने के कारण देश में अतिसार रोग से लगभग 20 लाख लोग असमय ही काल के गाल में समा जाते हैं।
- जलवायु में तापमान वृद्धि के कारण वर्षा की कमी का प्रभाव खाद्यान्न उत्पादन में भी प्रत्यक्ष दिखाई देता है तथा अन्न संकट से कुपोषण खाद्यान्न असुरक्षा की स्थिति बनती जा रही है।

जलवायु परिवर्तन

वैश्विक उष्मीकरण का अत्यंत सामान्य माप पृथ्वी की सतह के निकट भूमण्डलीय औसत तापमान की प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होना है , यदि हम आंकड़ों की दृष्टि से देखें तो राष्ट्रीय जलवायु आंकडा केन्द्र की रिपोर्ट से यह प्रदर्शित होता है कि वर्ष 2005 सर्वाधिक गर्मी का वर्ष था। वैश्विक मौसम सगंठन के आंकलन के अनुसार तथा जलवायु अनुसंधान एकक की रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 1998 के पश्चात वर्ष 2005 दूसरा सर्वाधिक तापमान वाला वर्ष माना गया । मौसम वैज्ञानिकों के अनुसार इसके पश्चात वर्ष 2008 से 2009 तक तापमान में कमोबेश उतार चढाव

की प्रवृति समुद्र क्षेत्र के तापमान तथा भू-प्रदेशों के तापमान वृद्धि से प्रभावित रही है। तथापि भू-प्रदेशों के तापमान में समुद्री क्षेत्र की तुलना में अधिक तीव्रता से वृद्धि होती है । ऐसा प्राकृतिक कारकों अर्थात् सौर - विकिरण, ज्वालामुखीय विस्फोट में परिवर्तन होने के कारण संभावित है ।

भौगोलिक अध्ययनों एवं वैज्ञानिकों के अनुसार ग्रीनहाउस से उत्सर्जित गैसों का पर्यावरण तथा वातावरण में जमाव तेजी से बढ़ा है । इसके परिणामस्वरूप जलवायु के औसत तापमान और गैसों में वृद्धि हुई है । इसके परिणामस्वरूप परिवर्तन की गति काफी तेज रही है । अन्य शब्दों में कहा जाए कि मानवीय गतिविधियों के कारण प्रकृति में बदलाव आए हैं तो अतिश्योक्ति न होगी।

ओजोन परत में छिद्र

विज्ञान की भाषा में ओजोन गैस 03 आक्सीजन का अपरूप है, जिसके प्रत्येक अणु में तीन परमाणु विद्यमान होते हैं । ओजोन एक अत्यधिक अभिक्रियाशील गैस है, जिसका उपयोग जल शुद्धीकरण , वायु को विसंक्रमणशील करने तथा अनेक खाद्य पदार्थों के सरंक्षण के लिए किया जाता हैं। किंतु, मोटर वाहनों एवं औद्योगिक इकाइयों तथा आर्गेनिक गैसों से वायुमंडल में निर्मित ओजोन कृषि फसलों, मानव सहित अन्य प्राणियों के जीवन के लिए खतरनाक है । इस उद्देश्य से 1998 में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण संरक्षण अभिकरण में एक वायु - नियम निर्धारित किया गया कि कोयले के दहन में विद्युत संयत्रों से निकलने वाली नाइट्रोजन ऑक्साइड पर अंकुश रखा जाए। ओजोन परत सूर्य से निकलनेवाली पराबैंगनी विकिरण के दुष्प्रभाव से पृथ्वी पर रहने वाले समस्त जीवों को बचाती है । कभी- कभी समताप मंडल में क्लोरो-फ्लोरीकार्बन सी एफसी की मात्रा काफी अधिक हो जाती है जिससे एक बढ़े क्षेत्र में संर्पूण ओजोन नष्ट होकर एक छिद्र बन जाता है। कभी-कभी यह ओजोन परत काफी पतली भी हो जाती है जिससे सूर्य की पराबैंगनी विकिरण का मानवीय स्वास्थ्य पर कुप्रभाव पड़ने लगता है। 16 सितम्बर 2002 को ओजोन दिवस के अवसर पर संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम एवं विश्व मौसम विज्ञान संगठन द्वारा प्रस्तुत रिर्पोट के अनुसार ओजोन परत में बना छिद्र अब भरने लगा है।

वैश्विक उष्मीकरण तथा हमारे देश भारत का जहॉ तक संबंध है, भारत वर्तमान में विश्व का सबसे बड़ा क्रेडिट कार्ड आपूर्तिकर्ता देश है । उर्जा के उपयोग में बचत करने हेतु स्वच्छ प्राद्योगिकी को अंगीकृत करके विकासशील देश कार्बन क्रेडिट अर्जित कर सकते हैं। ग्रीनहाउस से उत्सर्जित गैसों को नियंत्रित करने के लिए यह स्वच्छ एंव निर्मल प्रौद्योगिकी सार्थक तथा सराहनीय उपाय हैं ।

कोपनहेगन सम्मेलन में प्रतिबद्धता

वैश्विक स्तर पर पर्यावरण के विभिन्न पक्षों की और चिन्तन की दिशा में कोपनहेगन सम्मेलन को महत्वपूर्ण रूप से रेखांकित किया जा सकता है। वैश्विक जन समुदाय विगत दशक से मानव जनित कारणों से ग्रीनहाउस गैंसों के उत्सर्जन के परिणामस्वरूप हुए अप्रत्याशित जलवायु परिवर्तन, उसकी परिस्थितियों तथा जीव समुदाय पर पड़ रहे गंभीर परिणामों से चिंतित

है । हमारे देश द्वारा अंतराष्ट्रीय वार्ताओं में अपनी स्थिति स्पष्ट की जा चुकी है । यूएनसीसी तथा अन्य अंतर्राष्ट्रीय मंचो पर जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप उत्पन्न होने वाले प्रलयकारी दृश्य से निपटने के लिये अंतराष्ट्रीय सहयोग से कार्यवाही करने की आवश्यकता लगभग दो दशक पूर्व अनुभव की गई थी । जून 1992 में रियो द जेनेरियो में सयुंक्त राष्ट्र पर्यावरण एवं विकास शिखर सम्मेलन आयोजित किया गया तथा पहली बार बहुपक्षीय वार्षिक व्यवस्था यू.एन.एफ.वी.सी. संयुंक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन अभिसमय को अंगीकार करके की गई थी । समय के साथ अंतराष्ट्रीय मंचों के स्वास्थ्य पर पड़ रहे दुष्प्रभावों के प्रति चिंता व्यक्त की जाती रही है ।

इसी क्रम में 18 दिसम्बर, 2009 को कोपनहेगन में जलवायु परिवर्तन पर आयोजित शिखर सम्मेलन में दुनिया को संरक्षित करने की दिशा में दो प्रारूप प्रस्तुत किए गए । इसमें विश्व के 102 देशों के प्रतिनिधियों द्वारा भाग लिया गया । कोपनहेगन शिखर सम्मेलन में वैश्विक ताप में वृद्धि तथा जलवायु परिवर्तन के प्रति उदासीन दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रतिनिधि देशों ने एक दूसरे पर खूब आरोप - प्रत्यारोप भी लगाए । इस स्थिति का सामना करने के लिए भावी कारगर उपायों तथा व्यय होने वाली धनराशि पर विचार किया गया ।

इस संदर्भ में यह परिदृश्य भी कटु सत्य की भांति है कि आज पूरे विश्व में औद्योगिक विकास और संचार क्रांति पूर्ण विकसित दौर में है। विश्व सहित भारत देश की जनसंख्या भी तेजी से बढ़ रही है, मानवीय संसाधनों में भी उसी गति से वृद्धि हो रही है। आज सड़कौ पर तरह-तरह के वाहनों में भी वृद्धि हो रही है। आज मनुष्य प्रगति और समय की बचत की होड़ में उर्जा बचत के विकल्पों की ओर ध्यान नहीं दे रहा है। प्रगति तथा भौतिक संपन्नता पर बल देकर व्यक्ति हरे भरे प्रदेशों के स्थान पर गगनचुम्बी भवन निर्मित करता जा रहा है। हरियाली की कमी तथा वाहनों की भीड़ द्वारा उत्सर्जित कार्बन- डाईआक्साइड गैस की अधिकता होने के कारण जलवायु का ताप बढ़ता जा रहा है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर संचालित एक महत्वपूर्ण अध्ययन के माध्यम से यह चेतावनी भी दी गई है कि वैश्विक तापमान वृद्धि तथा तीव्रता से बदलती जलवायु के कारण वर्ष 2050 तक पृथ्वी पर पाए जाने वाले अनेक पशुओं तथा पौधौं की अनेक प्रजातियां एवं किस्में लुप्त होने के कगार पर जा सकती है।

आज हम वैज्ञानिक उन्नति तथा औद्योगिक प्रगति के युग में पूर्ण स्वस्थ होने तथा एक रोगमुक्त विश्व देने के लिए प्रयास कर रहें हैं तथा पहले से विद्यमान रोगों पर विजय पाने के लिए संघर्षरत हैं। दूसरी ओर भूमण्डलीय तापन के कारण हाल ही के दिनों में नए-नए क्षेत्र उत्पन्न हो रहे हैं। इसका प्रमुख कारण वायुमंडल के बढ़ते तापमान में अनेक नए-नए कीटाणु एवं विषाणु अधिक सक्रिय एवं प्रभावी हो गए हैं। गर्म तथा नम वातावरण इनके पनपने और विकसित होने में सहायक हो रहा है। वनों, खेतों खलिहानों में नए-नए कीड़े मकोड़े व मच्छर हरियाली तथा फसलें नष्ट कर रहे हैं। भाँति- भाँति के मच्छरजनित रोग जलवायु में उष्णता तथा आर्द्रता वृद्धि का ही परिणाम है।

आज देश में औद्योगिक विकास, शहरीकरण विस्तार, जनसंख्या में वृद्धि के साथ-साथ वन वृक्षों, जलाशय, नदियों, पर्वतों, का तीव्र गति से ह्रास हुआ है। इसके परिणमस्वरूप मानव

जनित कार्य कलापों से जल एवं वायु प्रदूषित होते जा रहे हैं। पर्यावरण संरक्षण एवं संतुलन की समस्या 21वीं सदी में एक चुनौती और गंभीर समस्या बन गई है। समय की आवश्यकता को समझकर यदि आज भी इसके प्रति जागरूक न हुए तो स्वच्छ सुंदर एवं प्रदूषण मुक्त भारत निर्माण एक दिवास्वप्न बनकर रह जाएगा। इस दिशा में सरकार तथा जन सहयोग दोनों ही पक्षों की तरफ से सामूहिक प्रयास किए जाने की आवश्यकता है। प्रदूषण मुक्त वातावरण प्रदान करने के सौर उर्जा विकल्पों पर बल देने के साथ साथ संसाधन बचत को भी एक जन अभियान दिए जाने की आवश्यकता है।

संदर्भः

1. जलवायु परिवर्तन विशेषांक, योजना, जून,2008
2. 'ग्लोबल वार्मिग ए काउज एण्ड चेलेंज' विषयक डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू ग्लोबल वार्मिग इंटरनेट सामग्री

कंगारू मातृ सुरक्षा : शिशु का अधिकार एवं माँ की अनुभूति

डा. गीतांजलि*

समयपूर्व जन्म अथवा गर्भावस्था के दौरान कुपोषण से विश्व में अनुमानित 20 करोड़ शिशु कम वजन (<2500 ग्राम) के पैदा होते हैं और इनमें से अधिकांश विकासशील देशों में हैं । उच्च नवजात शिशु मृत्यु दर में इन शिशुओं का महत्वपूर्ण योगदान है । कम वजन शिशुओं में अधोत्वचीय वसा एवं ब्राउन वसा, जो कि तापमान स्थिर रखने में सहायक हैं, कम होती है अतः ये शिशु अपने शरीर का तापमान स्थिर रखने में अक्षम होते हैं एवं उन्हें विशेष परिचर्या की आवश्यकता होती है ।

अधिकांश विकासशील देशों में आधुनिक तकनीकें (उदाहरण के लिए इनक्यूबेटर) या तो उपलब्ध नहीं हैं और यदि हैं भी तो संख्या में कम होने, समुचित रखरखाव व दक्ष कार्यकर्ताओं के अभाव के कारण उपयोग नही हो पाते हैं ।

इन परिस्थितियों में कम वजन शिशुओं की देखभाल एक दुष्कर कार्य हो जाता है । दो दशक पूर्व कोलम्बिया के बोगोटा प्रांत के रे एवं मार्टिनेज ने यह विधि अपूर्ण इनक्यूबेटर सुरक्षा के विकल्प की तरह उन कम वजन व समयपूर्व जन्मे शिशुओं के लिए विकसित की थी जिन्होंने अपनी आरंभिक समस्याएं पार कर ली थीं और जिन्हे अब सिर्फ भोजन व विकास की आवश्यकता थी । कंगारू मातृ सुरक्षा इन शिशुओं के लिए एक सशक्त एवं आसानी से प्रयोग की जाने योग्य एक उपयोगी विधि है जो तापमान स्थिर रखने, स्तनपान, संक्रमण से सुरक्षा एवं प्रेम प्रदान करने में सक्षम है ।

कंगारू मातृ सुरक्षा क्या है?

कंगारू एक स्तनपायी प्राणी है जिसका शिशु जन्म के समय अविकसित होता है यह अविकसित शिशु जन्म के पश्चात मादा कंगारू के पेट के निचले भाग में स्थित थैली में विकसित होता है जहाँ मादा कंगारू के स्तन भी होते हैं, कंगारू मातृ सुरक्षा में माँ एक मादा कंगारू की भांति शिशु को अपनी छाती से सटा कर रखती है । इस विधि से शिशु को कई लाभ हैं जैसे किः

- शिशु का तापमान उचित रहता है ।
- स्तनपान मे बढ़ोतरी होती है ।
- संक्रमण का खतरा कम होता है ।
- माँ व शिशु में लगाव बढ़ता है ।

---

*चिकित्सा अधिकारी, प्रजनन एवं जैव चिकित्सा विभाग, राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण संस्थान, नई दिल्ली।

कंगारू मातृ सुरक्षा के भाग

कंगारू मातृ सुरक्षा के दो महत्वपूर्ण भाग हैंः-

- **त्वचा संपर्क** : शिशु की त्वचा को माँ की त्वचा से, छाती पर लगातार अधिक से अधिक समय तक लगा कर रखना इस विधि का एक अनिवार्य भाग है ।
- **स्तनपान** : कंगारू मातृ सुरक्षा में शिशु को केवल माँ का दूध ही पिलाया जाता है । इस विधि से स्तनपान में बढ़ोतरी होती है तथा कम वजन के शिशु को स्तनपान सीखने में सहायता मिलती है ।

किन बच्चों को कंगारू मातृ सुरक्षा चाहिए?

वे सभी शिशु जिनका वजन 2.5 किलोग्राम से कम है, कंगारू मातृ सुरक्षा से लाभान्वित होंगे । जन्म के समय शिशु का वजन जितना कम होगा इस विधि को अपनाने से उतना ही अधिक लाभ होगा । आरंभ में इन शिशुओं को विशेष देखभाल की जरूरत हो सकती है । अतः चिकित्सक की सलाह एवं निगरानी में ही कंगारू मातृ सुरक्षा की शुरूआत की जानी चाहिए।

कंगारू मातृ सुरक्षा की शुरूआत

चिकित्सक की सलाह एवं मार्गदर्शन के बाद ही माँ को अपने शिशु को यह सुरक्षा प्रदान करनी चाहिए । चिकित्सक अथवा नर्स की देखरेख में यह प्रक्रिया नर्सरी अथवा वार्ड में शुरू करनी चाहिए अस्पताल से छुट्टी के बाद माँ को कंगारू मातृ सुरक्षा घर में भी कराते रहना चाहिए। इस दौरान चिकित्सक के निर्देशानुसार शिशु को अस्पताल में ला कर दिखाना जरूरी है। अन्य परिवारजनों को भी माँ के काम में हाथ बँटाना चाहिए, ताकि माँ अपने शिशु को अधिक से अधिक समय दे सके ।

कंगारू मातृ सुरक्षा के लिए माँ को क्या करना चाहिए ?

किसी भी आयु या धर्म की शिक्षित या अशिक्षित माँ कंगारू मातृ सुरक्षा करवा सकती है। इसके लिए निम्नलिखित बिन्दु अनिवार्य हैंः-

- **इच्छा शक्तिः** माँ को यह सुरक्षा करवाने के लिए इच्छुक होना चाहिए । हर माँ अपने बच्चे के लिए हर संभव कार्य करना चाहती है । एक बार कंगारू मातृ सुरक्षा शुरू करने के बाद माँ को अपने शिशु के लिए कुछ कर पाने की सुखद अनुभूति होती है ।
- **स्वास्थ्य एवं भोजनः** कंगारू मातृ सुरक्षा के लिए माँ को निरोग होना चाहिए तथा चिकित्सक के परामर्शानुसार उसे पौष्टिक भोजन लेना चाहिए।
- **साफ़ सफ़ाईः** माँ को प्रतिदिन स्नान करना चाहिए, साफ़ कपड़े पहनने चाहिए, नाखून छोटे तथा साफ रखने चाहिए और हाथ स्वच्छ रखना चाहिए।

- **सहायक परिवारः** अन्य परिवारजनों को न केवल माँ को प्रोत्साहन देना चाहिए, बल्कि अन्य लोग भी माँ को आराम देने के किए कुछ समय के लिए बच्चे को कंगारू सुरक्षा दे सकते हैं। इसके अलावा जब तक बच्चे को कंगारू मातृ सुरक्षा की आवश्यकता है, घर के काम-काज में हाथ बँटाना चाहिए ।
- **माँ के कपड़ेः** इस दौरान माँ कोई भी आगे से खुलने वाला वस्त्र जैसे कि गाउन, ब्लाउज - साड़ी अथवा शाल पहन सकती है ।
- **बच्चे के कपड़ेः** बच्चे को टोपी, जुराबें, लंगोट एवं आगे से खुला बिना बाजू की कमीज पहनानी चाहिए ।

कंगारू मातृ सुरक्षा की विधि

- बच्चे को माँ की छाती पर दोनों स्तनों के बीच में सीधा रखना चाहिए ।
- बच्चे का पेट व छाती माँ की छाती एवं पेट के ऊपरी भाग से सटा हो ।
- बच्चे का सिर एक तरफ मुडा एवं थोड़ा ऊपर की तरफ रहना चाहिए ताकि उसे सांस लेने में परेशानी न हो तथा वह माँ को देख सके ।
- बाजू एवं टांगें मुड़ी होनी चाहिए
- बच्चे को नीचे से किसी कपड़े का सहारा देना चाहिए ।

दूध पिलाना

- बच्चे को छाती के बीच मे रखने से माँ के दूध की मात्रा बढ़ती है ।
- कंगारू मातृ सुरक्षा के दौरान माँ अपना दूध निकाल सकती है ।
- बच्चे की क्षमतानुसार उसे कटोरी, चम्मच या नलकी से दूध पिलाया जा सकता है ।

एकांतता

- कंगारू मातृ सुरक्षा के दौरान माँ को एकांत स्थान मिलना चाहिए ।

कंगारू मातृ सुरक्षा की अवधि

आरंभ में हो सकता है, माँ ज्यादा देर तक कंगारू मातृ सुरक्षा न कर पाए, पर हर बार शुरू करने पर यह कम से कम एक घण्टे तक करवानी चाहिए । संभव हो तो लगातार 24 घण्टे तक कंगारू मातृ सुरक्षा करवानी चाहिए ।

कंगारू मातृ सुरक्षा के दौरान आराम

आरामदायक कुर्सी का या बिस्तर पर उचित मात्रा में तकियों का इस्तेमाल कर माँ कंगारू मातृ सुरक्षा के दौरान आराम कर सकती है या सो सकती है ।

कंगारू मातृ सुरक्षा करवाना कब बंद करना चाहिए

अस्पताल से घर जाने के बाद भी माँ एवं बच्चे के आराम के अनुसार जब तक बच्चा 2.5 किलो का न हो जाए, कंगारू मातृ सुरक्षा करवानी चाहिए । क्योंकि जब शिशु 2.5 किलो वजन तक पहुँच जाता है तब संभावित समस्याएँ बहुत कम हो जाती हैं। शिशु अपने हाथ-पैर बाहर निकालने लगता है और बंधन में रहना पसंद नहीं करता, अतः कंगारू मातृ सुरक्षा बंद किया जा सकता है।

अस्पताल से अवकाश के बाद

अस्पताल से अवकाश के बाद चिकित्सक के परामर्शानुसार बच्चे की जाँच करानी चाहिए।

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि कंगारू मातृ सुरक्षा कम वजन बच्चों के लिए एक लाभदायक एवं प्रभावशाली देखभाल विधि है । इसके निम्नलिखित लाभ हैंः

- स्तनपानः इससे स्तनपान की अवधि एवं मात्रा दोनों में बढ़ोतरी होती है।
- स्थिर तापमानः अधिक से अधिक देर तक माता की त्वचा के संपर्क में रहने से कमजोर शिशु का तापमान भी स्थिर व सामान्य रहता है । यह शिशु को एक तापमान स्थिर रखने वाली मंहगी मशीन (इनक्यूबेटर) में रखने के समान है ।
- अस्पताल से जल्दी छुट्टीः कंगारू मातृ सुरक्षा प्राप्त करने वाले बच्चों का वजन दूसरे बच्चों की अपेक्षा जल्दी बढ़ता है इसलिए इन बच्चों को अस्पताल से जल्दी छुट्टी मिलती है ।
- रोगों में कमीः कंगारू मातृ सुरक्षा प्राप्त करने वाले बच्चे अधिक स्वस्थ रहते हैं एवं इन बच्चों को संक्रमण का खतरा कम होता है ।
- अन्य लाभः कंगारू मातृ सुरक्षा से शिशु एवं माता पिता दोनों को लाभ होता है । शिशु माता के पास होने से माता कम मानसिक तनाव महसूस करती है । स्वयं में विश्वास पैदा होता है, बच्चे से लगाव बढ़ता है तथा बच्चे के लिए कुछ अच्छा कर पाने की सुखद अनुभूति प्राप्त होती है ।

संदर्भः

1. www.kmcindia.com
2. (2)नवजात शिशु सुरक्षा कार्यक्रम - ट्रेनिंग मैन्युअल

जलवायु परिवर्तनः कारण और निवारण

ओम कुमार कर्ण*

जलवायु परिवर्तन पूरे विश्व के लिए एक गंभीर समस्या बन गई है। जलवायु परिवर्तन के कारण प्रकृति का संतुलन बिगड़ने लगा है। इसके कुप्रभाव से वैश्विक तापमान में वृद्धि हो रही है, जिसके कारण विभिन्न प्रकार की समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं, जैसे- समुद्रतल का बढ़ना, बर्फ का पिघलना, समुद्र के सतही तापमान में वृद्धि, भारी वर्षा, सूखा, अनावृष्टि इत्यादि। जलवायु परिवर्तन के कारणों को दो भागों में बाँटा जा सकता है - प्राकृतिक कारण व मानव निर्मित कारण।

प्राकृतिक कारण

जलवायु परिवर्तन के लिये अनेक प्राकृतिक कारण जिम्मेदार हैं। इनमें से प्रमुख हैं - महाद्वीपों का खिसकना, ज्वालामुखी, समुद्री तरंगे और धरती का घुमाव।

महाद्वीपों का खिसकना

महाद्वीप पृथ्वी की उत्पत्ति के साथ ही बने थे। समुद्र में तैरते रहने तथा वायु के प्रवाह के कारण इनका खिसकना निरंतर जारी है। इस प्रकार की हलचल से समुद्र में तरंगे व वायु प्रवाह उत्पन्न होता है। इस प्रकार के बदलावों से जलवायु परिवर्तन होते हैं।

ज्वालामुखी

जब भी कोई ज्वालामुखी फूटता है तो काफी मात्रा में सल्फर डाई-ऑक्साइड, पानी, धूलकण और राख के कणों का वातावरण में उत्सर्जन होता है। काफी अधिक मात्रा में निकली हुई गैसें लंबे समय तक जलवायु को प्रभावित करती हैं। गैस व धूल कण सूर्य की किरणों का मार्ग अवरूद्ध कर देते हैं जिसका प्रभाव तापमान पर पड़ता है।

पृथ्वी का झुकाव

पृथ्वी 23.5 डिग्री के कोण पर अपनी कक्षा में झुकी हुई है। इसके इस झुकाव से मौसम में परिवर्तन होता है। अधिक झुकाव से अधिक गर्मी व अधिक सर्दी होती है तथा कम झुकाव से कम गर्मी व साधारण सर्दी होती है।

पृथ्वी का भ्रमण कक्ष धीरे-धीरे अंडाकर से वृत्ताकार तथा वृत्ताकार से अंडाकर रूप में परिवर्तित होता रहता है। इस विकेन्द्रीयता के कारण सौर ऊर्जा में परिवर्तन होता है। पृथ्वी का अपनी कक्षा से जितना विकेन्द्रीकरण होगा सौर ऊर्जा की प्राप्ति में उतना ही परिवर्तन होगा।

* कनिष्ठ हिन्दी अनुवादक, राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण संस्थान, नई दिल्ली-110067.

पेरीहेलियन तथा अपहेलियन के बीच सूर्य से पृथ्वी की दूरी में परिवर्तन से वायुमंडल में प्राप्त होने वाली ऊर्जा में लगभग सात प्रतिशत का परिवर्तन होता है। जब पृथ्वी का भ्रमण कक्ष सबसे अधिक अंडाकार होता है तो सूर्य तथा पृथ्वी की दूरी भी सबसे अधिक होती है ऐसी स्थिति में प्राप्त होने वाली सौर ऊर्जा में लगभग 20 प्रतिशत तक का परिवर्तन होता है।

समुद्री तरंगे

समुद्र जलवायु का एक प्रमुख भाग है। यह पृथ्वी के 71% भाग पर फैला हुआ है। सूर्य द्वारा पृथ्वी की सतह की अपेक्षा दुगुनी दर से सूर्य की किरणों का अवशोषण किया जाता है। समुद्री तरंगों के माध्यम से संपूर्ण पृथ्वी पर काफी अधिक मात्रा में उष्मा का प्रसार होता है।

वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड गैस का प्रवाह

कुछ वायुमंडलीय गैसें, जैसे-कार्बन डाई-ऑक्साइड, जल वाष्प तथा मीथेन इत्यादि, पृथ्वी सतह से दीर्घ तरंग विकिरण को अवशोषित करके पृथ्वी के ऊर्जा संतुलन को बिगाड़ देती हैं। पृथ्वी सतह पर इन दीर्घ तरंग विकिरण की वापसी से पृथ्वी की जलवायु में उष्ण ऊर्जा की मात्रा में वृद्धि हो जाती है।

सौर ऊर्जा उत्पत्ति में परिवर्तन

सौर ऊर्जा की उत्पत्ति में एक प्रतिशत के परिवर्तन से पृथ्वी के औसत तापमान में 0.5 से 1.0 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि हो जाती है। सन् 1980 में किए गए एक अध्ययन के अनुसार 18 महीने की अवधि में कुल सौर ऊर्जा का 0.1 प्रतिशत ही पृथ्वी तक पहुँच पाता है। यदि ऐसा कुछ दशकों तक होता रहा तो यह वैश्विक जलवायु को प्रभावित करने का मुख्य कारण हो सकता है।

जलवायु परिवर्तन के मानव निर्मित कारण

औद्योगीकरण

आज पूरे विश्व में औद्योगीकरण की होड़ लगी है। विकास की दौड़ में जगह-जगह औद्योगिक कल-कारखाने स्थापित किए जा रहे हैं। इन औद्योगिक कल-कारखानों से भारी मात्रा में क्लोरोफ्लोरो कार्बन, नाइट्रस ऑक्साइड, कार्बन डाई-ऑक्साइड इत्यादि हानिकारक गैसों का उत्सर्जन होता है जिससे ओजोन परत को क्षति पहुँच रही है। ओजोन परत वायुमंडल में स्थित एक ऐसी परत है जो सूर्य से निकलने वाली हानिकारक किरणों को पृथ्वी तक आने से रोककर इसकी रक्षा करती है। ऑटोमोबाइल से निकलने वाले धुँए से भी वायु प्रदूषण में वृद्धि हो रही है, जिससे ओजोन परत को क्षति पहुँच रही है।

वनों की कटाई

वनों की अंधाधुंध कटाई से वायुमंडल में 1.5 विलियन टन कार्बन का उत्सर्जन होता है। मानवीय क्रियाकलापों हेतु उष्णकटिबंधीय वनों की कटाई के कारण लगभग 20 प्रतिशत कार्बन का उत्सर्जन होता है। इसके परिणामस्वरूप सन् 2100 ई. तक 87 से 130 विलियन टन कार्बन के उत्सर्जन की आशंका है। इस प्रकार ग्रीन हाउस प्रभाव को कम करने के लिए वनों की कटाई को रोकना आवश्यक है।

जनसंख्या में वृद्धि

आज पूरे विश्व की जनसंख्या में तीव्र गति से वृद्धि हो रही है। लोगों की संख्या अधिक होने से सभी प्रकार की आवश्यकताएँ (यथा - ऊर्जा, खाद्य पदार्थ, जल, ईंधन इत्यादि) बढ़ जाती हैं जिससे संसाधनों का अति-उपभोग होने लगता है। घरों की आवश्यकता को पूरा करने के लिए वनों की कटाई की जाती है। प्रदूषण तथा वैश्विक तापमान में वृद्धि होती है ।

जलवायु परिवर्तन के कुप्रभाव

समुद्र तल का बढ़ना

बीसवीं शताब्दी में बर्फ के ग्लैशियर के पिघलने तथा गर्म समुद्री जल के विस्तार के कारण समुद्र सतह में लगभग 15 सेंटीमीटर (6 ईंच) की वृद्धि हुई है। अनुमान लगाया जा रहा है कि इक्कीसवीं शताब्दी में समुद्र सतह में लगभग 59 सेंटीमीटर तक की वृद्धि हो सकती है।

आर्कटिक समुद्र का पिघलना

समुद्री बर्फ की मोटाई 1950 ई. की तुलना में आधी हो गई है। इस बर्फ के पिघलने से सागरीय संचलन में परिवर्तन हो रहा है तथा आर्कटिक की उष्णता में तेजी से वृद्धि हो रही है।

ग्लेशियर का पिघलना

विगत 100 वर्षों में विश्व के सभी क्षेत्रों में पहाड़ी ग्लेशियर के आकार छोटे हुए हैं। ग्रीनलैंड की बर्फीली परते भी काफी तेजी से पिघल रहीं हैं।

समुद्र सतह के तापमान में वृद्धि

पिछले कुछ दशकों में समुद्र सतह में तेजी से वृद्धि हो रही है। इसके परिणामस्वरूप पिछले कुछ दशकों में विश्व की लगभग एक चौथाई प्रवाल-शैलमाला नष्ट हो गईं हैं, जिससे कई जलीय जीव जन्तुओं की मृत्यु हो गई है। इसके साथ ही समुद्र में कार्बन डाई-ऑक्साइड की

अधिकता से समुद्री जल अधिक तेजाबी हो रहा है जिससे प्रवाल-शैलमाला तथा जलीय जीव के लिए संकट उत्पन्न हो गया है।

भारी वर्षा तथा सूखे का संकट

वायुमंडल के तापमान में वृद्धि होने से कई क्षेत्रों में भारी वर्षा होती है जिससे बाढ़ की विभीषिका का सामना करना पड़ता है। वहीं दूसरी ओर अधिक तापमान के कारण जल का वाष्पीकरण अधिक होने से नदियाँ, तालाब आदि के जल सूखने लगते हैं जिससे कई क्षेत्रों में सूखे की समस्या भी उत्पन्न हो जाती है।

मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव

जलवायु परिवर्तन से मानव स्वास्थ्य के मूल स्तंभ वायु, भोजन तथा जल पर विपरीत असर पड़ता है। रोग/बीमारियाँ जलवायु परिवर्तन के प्रति संवेदनशील होतीं हैं, विशेषकर तापमान में परिवर्तन के प्रति। बढ़े हुए तापमान का प्रभाव खाद्य उत्पादन, साफ पानी की उपलब्धता तथा रोगाणु वाहकों की वृद्धि पर भी पड़ता है। इससे लोगों में चेचक, मलेरिया, हैजा इत्यादि रोगों का खतरा बढ़ जाता है।

इस प्रकार जलवायु परिवर्तन सभी दृष्टिकोण से दुनिया के लिए चिंता का विषय है। 2007 में जलवायु परिवर्तन पर अंतर्शासकीय पैनल की बैठक में यह अनुमान लगाया गया कि जलवायु परिवर्तन के कारण हर दशक में वैश्विक तापमान में करीब 0.2 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि होगी। यदि वर्तमान या उससे अधिक दरों पर ग्रीन हाऊस गैसों का उत्सर्जन हुआ तो पिछली शताब्दी की तुलना में इस शताब्दी में विश्वव्यापी जलवायु परिवर्तन तेजी से होगा। मौसम संबंधी घटनाएँ, ग्रीष्म लहरें व तेज बारिशें अधिक होंगी। उष्णप्रदेशीय बवंडर अधिक प्रबल हो जाएंगे और उनमें हवाएँ अधिक तेज गति से चलेंगी तथा वर्षा की मात्रा बढ़ जाएगी।

जलवायु परिवर्तन को कम करने के उपाय

जलवायु परिवर्तन को कम करने के लिए सभी को मिलकर प्रयास करने होंगे । इसके लिए हमें अपनी जीवन शैली में परिवर्तन लाकर प्राकृतिक संसाधनों के दोहन को कम करना होगा। वनों की कटाई को रोककर वनरोपण के कार्य में तेजी लानी होगी। हानिकारक गैस उत्सर्जित करने वाले वाहनों के उपयोग में कमी लाना आवश्यक है। जीवाष्म ईंधन के उपयोग में कमी करनी होगी। प्राकृतिक ऊर्जा स्रोतों जैसे -सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा आदि के उपयोग पर अधिक बल देना होगा। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में विश्व के सभी देश जलवायु परिवर्तन को कम करने के प्रति जागरूक हो रहे हैं। गत वर्ष दिसम्बर में इस मसले को हल करने के लिए कोपेनहेगेन में एक विश्वस्तरीय सम्मेलन का आयोजन किया गया, जिसमें दुनिया के कई देशों ने भाग लिया। हालांकि इस सम्मेलन में विभिन्न देशों के बीच सहमति नहीं बन पायी परन्तु अमेरिका, भारत, चीन, ब्राजील और दक्षिण अफ्रीका ने इस समझौते पर अपनी सहमति जताई। इस समझौते के मुख्य बिंदु इस प्रकार हैं -

1. इस सहमति पर हस्ताक्षर करने वाले देश जलवायु परिवर्तन की गंभीरता को समझते हैं और पृथ्वी के तापमान में दो डिग्री सेल्सियस से अधिक की बढ़ोतरी नहीं होने देने की दिशा में मिलकर काम करेंगे।
2. ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में बड़े पैमाने पर कटौती की आवश्यकता है, ताकि पृथ्वी के तापमान को बढ़ने से रोका जा सके।
3. जलवायु परिवर्तन की वजह से गरीब देशों को जो क्षति उठानी पड़ रही है या जो नुकसान उन्हें भविष्य में उठाना पड़ सकता है उसे कम करने के लिए तत्काल कदम उठाने की जरूरत है। इसमें छोटे द्वीप देशों और अफ्रीका के गरीब देशों का खास तौर पर जिक्र किया गया है।
4. सहमत होने वाले देश अपने-अपने देशों में ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन का हिसाब रखेंगे और एक तय फॉर्मेट के तहत इसकी सूचना देंगे कि उन्होंने कितनी कटौती की है। समझौते में कहा गया है कि गैसों के उत्सर्जन के लक्ष्य का हिसाब-किताब गंभीरता और पारदर्शिता के साथ किया जाएगा।
5. समझौते पर हस्ताक्षर नहीं कर रहे देशों को भी हर संभव सहायता दी जाएगी और उनकी राष्ट्रीय संप्रभुता का सम्मान किया जाएगा, लेकिन यह भी कहा गया है कि अगर किसी देश को जलवायु परिवर्तन से निबटने के लिए कोई आर्थिक सहायता दी जाएगी तो उसके लिए एक तय प्रक्रिया का पालन किया जाएगा।
6. जंगलों को बचाने और उनकी हालत सुधारने के लिए समुचित प्रयास किए जाने की आवश्यकता बताई गई है।
7. जो देश पहले ही ग्रीनहाउस गैसें कम उत्सर्जित करते हैं उन्हें आर्थिक प्रोत्साहन दिया जाए ताकि वे उत्सर्जन में कमी करते हुए अपना विकास कर सकें।
8. जलवायु परिवर्तन से निबटने के आर्थिक पक्ष पर विचार करते हुए कहा गया है कि वर्ष 2020 तक विकसित देश इस काम के लिए सौ अरब डॉलर के दीर्घकालिक कोष के लिए धन जुटाने की दिशा में मिलकर काम करेंगे। ये धन कई स्रोतों से आएगा और इस धन के उपयोग के लिए जो व्यवस्था बनेगी उसमें विकसित और विकासशील दोनों तरह के देशों को बराबर भागीदारी दी जाएगी।
9. इस काम के लिए एक उच्चस्तरीय अंतर्राष्ट्रीय पैनल गठित किया जाएगा।
10. विकासशील देशों को ग्रीन टेक्नोलॉजी उपलब्ध कराने के लिए व्यवस्था बनाए जाने पर भी सहमति हुई है।
11. वर्ष 2015 में इन बिंदुओं पर हुई प्रगति की समीक्षा की जाएगी।
12. उपरोक्त समझौते से जलवायु परिवर्तन पर कितना प्रभाव पड़ता है यह इस बात पर निर्भर करेगा कि समझौते पर किस प्रकार से अमल किया जाता है। हालांकि समस्या चाहे कितनी भी बड़ी हो यदि सही तरीके से प्रयास किये जाएँ तो उसका समाधान अवश्य निकल आता है। यदि हम सब मिलकर इस दिशा में सकारात्मक प्रयास करें तो निश्चित रूप से जलवायु परिवर्तन में कमी होगी और इसके कुप्रभाव से दुनिया को बचाया जा सकेगा।

संदर्भः

1. एवरीमैन्स साइंस मैगजीन, अक्टूबर-नवम्बर, 2009।
2. बी.बी.सी. की बेवसाइट तथा अन्य सम्बद्ध बेवसाइटों से।

किशोरावस्था की प्रमुख मानसिक समस्याएं

कृष्ण चन्द्र चौधरी*

डा. अंकुर यादव**

बाल्यकाल व युवावस्था के बीच की विकासशील अवस्था को किशोरावस्था कहते हैं। इस अवस्था में अनेक प्रकार के शारीरिक बदलावों के साथ ही साथ मनो-सामाजिक परिवर्तन भी होते हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा किशोर स्वास्थ्य की परिभाषा इस प्रकार दी गयी हैः- 'शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक रूप से स्वास्थ्य की अनुकूल चेतना, न कि केवल बीमारी की अनुपस्थिति''। आयु का यह एक नाजुक दौर होता है। किशोर व किशोरियां शरीर के विकास तथा भावनाओं की गहराई की दृष्टि से न बच्चों में समा पाते हैं और न बड़ों में । समाज का आवश्यक अंग बनने की प्रक्रिया में उनका नाजुक मन हर ओर विसंगतियों को देखता है और परेशान हो उठता है। किशोरावस्था में पाये जाने वाले स्वाभाविक परिवर्तन हैंः अभिभावकों से खिंचे-खिंचे रहना, अधिक स्वतंत्रता की इच्छा, विपरीत लिंग के प्रति आकर्षित होना व समानता के आधार पर संबंध, इत्यादि।

किशोरावस्था में शंका, डर व अधूरेपन की भावनाएं भी काफी पायी जाती हैं। इनमें चिंता अथवा तनाव, अवसाद, के कारण आत्महत्या आदि तक के विचार उत्पन्न होते हैं, जो कई प्रकार के मानसिक रोगों का आधार बनते हैं। किशोरावस्था में पाये जाने वाले मानसिक रोगों को निम्नांकित प्रकार से विभाजित किया जा सकता हैः-

अवियोजित (अनसुलझे) बचपन के रोग

बचपन के ऐसे मानसिक रोग जो उपचार के अभाव में ठीक नहीं होते, वे किशोरावस्था में भी यथावत बने रहते हैं; जैसे कि कई प्रकार की मनोविक्षिप्ति, स्कूल जाने के व्यवहार से संबंधित रोग, चंचलता, भय, मिर्गी आदि। अनेक बार विक्षिप्तता का रोग युवावस्था में स्वाधीन चेतना व भावनात्मक विकास के साथ ठीक हो जाता है, यद्यपि कुछ किशोर परिवार पर निर्भर रहते हैं व आजादी की भावना से वंचित हो जाते हैं। व्यवहार संबंधी रोग युवावस्था शुरु होने पर बढ़ जाते है; क्योकिं इस आयु में सामाजिक अवहेलना व विरोध की भावनाएं (जो कि किशोरावस्था के अंत में स्वाभाविक हैं) अधिक होती हैं।

किशोरावस्था में तनाव से उत्पन्न विकार

किशोरों पर पड़ने वाले ऐसे वाह्य सामाजिक प्रभाव जो उन्हें आन्तरिक रूप से विचलित कर देते हैं तनाव कहलाते हैं। बाहरी दबाव से बचने के लिए मनुष्य के शरीर में कई शरीर क्रियात्मक तथा मानसिक प्रतिरक्षात्मक अभिक्रियाएं होती हैं जो ज्यादा अथवा कम मानसिक तनाव का रूप ले सकती हैं।

*शोधार्थी, जामिया मिलिया इस्लामिया,नई दिल्ली।

**सहायक आचार्य,राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण संस्थान,नई दिल्ली-110067

शारीरिक रोगः तनाव से उत्पन्न होने वाले मुख्य शारीरिक रोग निम्नवत हैंः

1. श्वसन संबंधी रोग,
2. आंत के रोग
3. आंतरिक ग्रंथियो संबंधी रोग
4. अचानक बेहोशी, माइग्रेन, सिरदर्द आदि
5. किशोरियों में मासिक धर्म के विकार इत्यादि

भावनात्मक रोगः तनाव से उत्पन्न भावनात्मक रोगों में मुख्य रूप से उन्माद, अवसाद, आत्महत्या के विचार, घबराहट एवं हठ इत्यादि को उल्लिखित किया जा सकता है।

व्यवहार संबंधी रोगः असामाजिक गतिविधियां (चोरी करना, जुआ खेलना आदि), नशे की लत इत्यादि को किशोरों के व्यवहार संबंधी रोगों में रखते हैं। किशोरावस्था में बिस्तर भिगोना, कपड़ों में मल कर देना, हकलाना, मिट्टी खाना, स्कूल से डर, चंचलता, नींद के विकार (बुरे स्वप्न;नींद में दाँत किटकिटाना, बोलना, चलना या ज्यादा हिलना) आदि बच्चों में तनाव से उत्पन्न होने वाले मुख्य रोग हैं। अतः किशोरावस्था में मानसिक तनाव बहुत अधिक होता है, जिसके प्रमुख कारण पढ़ाई अथवा परिवार से संबंधित होते हैं।

कई अभिभावक किशोरावस्था में अधिक उत्तेजना, विरोध, अनुशासनहीनता, जिद्दीपन, सामाजिक नियमों की अवहेलना, देर से घर लौटना, बेशर्मी, कहना न मानना, आत्मविश्वास में कमी आदि लक्षणों से ग्रस्त अपनी संतानों को लेकर चिन्तित रहते हैं, इन सब के कुछ मनोवैज्ञानिक कारण हो सकते हैंः

1. स्वाधीनता - पराधीनता की उलझनें,
2. लैंगिक विकास व जिम्मेदारियों के बारे में तनाव,
3. अभिभावकों की अपेक्षा मित्रों का अधिक प्रभाव,
4. अपने भविष्य की चिंता आदि।

किशोरावस्था के कुछ मुख्य मानसिक विकार इस प्रकार हैंः

व्यवहार संबंधी रोग (असामाजिक अथवा गैरकानूनी गतिविधियां, स्कूल या घर से भाग जाना आदि), नशाखोरी (तंबाकू, शराब, भांग, चरस, अफीम आदि), विक्षिप्ति (तनाव, अवसाद, आहार न लेना आदि) और यौन विकृतियां (हस्तमैथुन, बिना विवाह के गर्भधारण, समलैंगिक संबंध आदि)।

युवावस्था के वे मानसिक रोग जिनकी उत्पत्ति किशोरावस्था में होती हैः

विखंडित मानसिकता (स्कीजोफ्रीनिया - अनुचित व्यवहार, बेतुकी, अतार्किक बातचीत, शक, वहम, विभ्रम आदि) अवसाद (जिसमें थकावट, दुखी मन, चिड़चिड़ापन, एकाग्रता में कमी, भूख व नींद में कमी आदि लक्षण होते हैं), आत्महत्या, नशाखोरी आदि रोग किशोरावस्था में प्रारंभ हो जाते हैं।

उपचार

किशोरावस्था में उत्पन्न रोगों के उपचार में मनोरोग चिकित्सा व पारिवारिक चिकित्सा सहायक होती है। विखंडित मानसिकता, अवसाद इत्यादि का समय पर उपचार करना चाहिए। किशोरों द्वारा दी गयी आत्महत्या की चेतावनी को गंभीरता से लेना चाहिए । परिवार व किशोर के बीच संतोषजनक बातचीत न होना भी उसके असामाजिक बनने का कारण हो सकता है। यदि परिवार का पूर्ण सहयोग न मिले, तो रोगी का उपचार मुश्किल हो जाता है। यदि अभिभावकों को किशोरावस्था में भाव व व्यवहार परिवर्तन की उचित जानकारी हो तो इस अवस्था में होने वाले रोगों को समय पर पहचाना जा सकता है।

अवसाद

अवसाद एक अस्थायी व स्वयं ठीक होने वाले रोगों जैसा रोग है। इसके लक्षण प्रायः छः से नौ माह तक रहते हैं। किशोरावस्था में अवसाद कई तरह से प्रकट हो सकता है। जैसे- पढ़ाई छोड़ देना, कहना न मानना, असामाजिक गतिविधियों में लिप्त होना, नशे की लत, आत्महत्या की कोशिश आदि। इस अवस्था में कुछ मानसिक प्रतिक्रियाएं, किशोरों के शारीरिक विकास व उनकी सोच के कारण भी होती है। उदाहरणस्वरूप- लैंगिक लक्षणों का विकास, विपरीत लिंग के प्रति आकर्षण, लक्ष्य के बारे में चिंता, मित्रों से अधिक घनिष्ठता, माता पिता से दूरी आदि।

आत्महत्या

किशोरावस्था में आत्महत्या मृत्यु का दूसरा सबसे प्रमुख कारण है। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक जैकब ने तीन प्रकार की क्रमवार परिस्थितियाँ बतायी हैं, जो किशोरावस्था में आत्महत्या का कारण बन सकती हैंः

1. पुरानी चलती आ रही समस्याएँ।
2. किशोरावस्था से संबंधित समस्याओं का जन्म, जिनके कारण पुरानी समस्याओं में वृद्धि हो जाये।
3. अंतिम परिस्थिति, ऐसी समस्याओं के प्रबल आक्रमण से होती है, जिसके कारण उत्पन्न प्रतिक्रियाओं में मान्य सामाजिक बंधन टूट जाते हैं।

आत्महत्या के तीन मूल तत्व हैंः

1. किसी की हत्या करने की इच्छा
2. स्वयं मरने की इच्छा
3. स्वयं को मरवाने की इच्छा

आत्महत्या के विभिन्न तरीके

आत्महत्या के तरीके जगह और समय पर निर्भर करते हैं। कई विकसित देशों में आत्महत्या के सार्वजनिक तरीके हैं। प्रायः घर में प्रयोग की जाने वाली गैस, दवाईयाँ (दर्द और नींद की गोलियां), बंदूक व विस्फोटक पदार्थों के माध्यम से आत्महत्या का प्रयास किया जाता है। कुछ क्षेत्रों में फांसी लगाना, नदी में डूबना, जलकर, चलती रेलगाड़ी से कटकर, किसी औज़ार, अथवा मशीन के द्वारा आत्महत्या करना भी प्रकाश में आता है।

अतः किशोरावस्था में आत्महत्या काफी व्यापक समस्या है। यद्यपि ज्यादातर आत्महत्याएं, दुर्घटना समझ ली जाती हैं। आत्महत्या का कारण मनोवैज्ञानिक है। अधिकतर व्यक्ति आत्महत्या से पहले संकेत दे देते हैं। आत्महत्या का प्रमुख कारण उदासी अथवा अवसाद है। किशोरावस्था में बच्चे माता पिता की अपेक्षा मित्रों पर अधिक निर्भर करते हैं और माता पिता के विरूद्ध बोलना भी सीख जाते हैं। यह व्यवहार प्रायः सामान्य होता है। इस अवस्था में कई बार नये रोग नहीं होते बल्कि बचपन के ठीक न हुए रोग ही होते हैं। मनोरोग अक्सर मित्रों या परिवार से संबंधित होते हैं। इस उम्र में अधिकांश मनोरोगों को पारिवारिक चिकित्सा से ठीक किया जाता है। शरीर में परिवर्तन, भविष्य अथवा भूत की चिंता अथवा पढ़ाई के कारण तनाव से मनोरोग उत्पन्न होते हैं। इस उम्र में नशा, आत्महत्या इत्यादि बहुत आम होते हैं। इस अवस्था में किसी कारण से किशोर अपने निश्चित लक्ष्य पर नहीं पहुँच पाता है, तो इससे एक विशेष परिस्थिति उत्पन्न होती है, जिसे कुंठा कहा जाता है। आत्महत्या की इच्छा जीवन के विकल्पों को नकारने से उत्पन्न होती है। इस इच्छा की समय पर पहचान व उसका उपचार जरुरी है। यद्यपि सामान्य से अधिक खुशी, अधिक योजनाएं बनाना, अधिक पैसा खर्च करना, चिड़चिड़ापन, नींद व भूख में कमी उन्माद रोग के लक्षण हैं। किशोरावस्था में व्यक्ति अवसाद के कारण नशे का व्यसनी बन जाता है। नशेड़ी व्यक्तियों में होने वाले मनोरोग में अवसाद प्रमुख है। अंततः आयु की इस अवस्था में किशोरावस्था की प्रमुख मानसिक समस्याओं को समय रहते दूर किया जा सकता है। आयु के इस नाजुक दौर में पारिवारिक सहयोग, भावनात्मक सहयोग, यथोचित चिकित्सा इत्यादि से समस्या का हल किया जा सकता है। अभिभावकों को उचित जानकारी हो, तो समय रहते उपचार व समाधान संभव है।

संदर्भः

1. कपूर, एम;मेंटल हैल्थ इन इंडियन स्कूल्स; सेज पब्लिकेशन, नई दिल्ली;1997
2. भाटिया, एम.एस; मनोरोग; नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया; नई दिल्ली;2004
3. व्योरा, ए.; मानसिक स्वास्थ्य और मनःचिकित्सा; आर्य प्रकाशन मंडल, नई दिल्ली;1994
4. हरलॉक, ई.बी;डेवेल्पमेंटल साइकोलॉजी-ए लाइफ-स्पैन एप्रोच;टाटा-मैक्ग्राहिल, नई दिल्ली; 1990
5. सिंह, ए.के; उच्चतर सामान्य मनोविज्ञान; मोतीलाल बनारसीदास, नई दिल्ली, 2006

वायु का जनस्वास्थ्य पर प्रभाव

डॉ पूनम सिंह*

मानव लगभग 8 से 10 प्रतिशत तक कार्बन डाई ऑक्साइड से पूर्ण वातावरण में कोई विशेष परेशानी का अनुभव नहीं करता तथा 12 प्रतिशत कम ऑक्सीजन युक्त वातावरण में रहने पर भी उसे कोई विशेष कोटि की अनुभूति नहीं होती। अशुद्ध वायु में निम्नांकित विशेषताएँ होती हैं :

1. कार्बन–डाई–ऑक्साइड की अधिकता।
2. जल वाष्प की अधिकता।
3. कार्बन–मोनोक्साइड, अमोनिया, हाइड्रोजन आदि विषैली गैसें।
4. धूल के कण।
5. रोग के जीवाणु।

उपरोक्त समस्त अशुद्धियाँ स्वास्थ्य पर निम्न प्रभाव डालकर हानि पहुँचाती हैं :

1. अशुद्ध वायु में बराबर सांस लेते रहने से श्वास सम्बन्धी रोग हो जाते हैं।
2. अत्यधिक कार्बनडाई ऑक्साइड तथा कम ऑक्सीजन वाली वायु में सांस लेने से शिरोवेदना, दम घुटना, जी मिचलाना आदि रोग हो जाते हैं।
3. दूषित वायु में धूल कण तथा रोग के कीटाणु होते हैं, वे यदि आँख या नाक में चले जायें तो विभिन्न प्रकार के रोगों की उत्पत्ति कर देते हैं।
4. निरन्तर दूषित वायु में रहने से हृदय गति मन्द होने लगती है।
5. रोग निरोधक क्षमता में कमी होने लगती है।
6. आस–पास में यदि निरन्तर रुई धुनने, चमड़े का दाम या ऊन बुनने आदि का काम होता रहे तो वातावरण दूषित हो जाता है। ऐसी वायु में सांस लेने से राजयक्ष्मा, निमोनिया, अतिसार आदि रोग हो सकते हैं।

शुद्ध वायु का स्वास्थ्य पर प्रभाव

शुद्ध वायु स्वास्थ्य के लिए नितान्त आवश्यक एवं महत्वपूर्ण होती है। उसका स्वास्थ्य पर निम्न प्रकार से प्रभाव पड़ता है :–

1. मनुष्य शुद्ध वायु ग्रहण कर पूर्ण स्वस्थ रहता है तथा श्वास सम्बन्धी रोगों से शीघ्र ग्रसित नहीं होता।

* सहायक प्राध्यापिका (पारिवारिक संसाधन प्रबन्धन) गृह विज्ञान महाविद्यालय, नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, फैजाबाद, उ0प्र0

2. नेत्र, रक्त–संचालन एवं पाचन–तंत्र सम्बन्धी रोग भी नहीं हो पाते।
3. शुद्ध वायु में रहने वाला व्यक्ति सदा स्फूर्ति लिए रहता है तथा प्रसन्नचित्त होकर कार्य करता है। अतः व्यक्ति को सदा स्वच्छ वातावरण में रहने का प्रयास करना चाहिए।

2. वायु का शुद्धिकरण

वायु से रहित कोई भी स्थान नहीं है तथा वायु के बिना हमारा जीवन असंभव है। स्वास्थ्य की दृष्टि से हमें शुद्ध वायु में ही रहना चाहिए। अशुद्ध वायु हमारे लिए बहुत घातक सिद्ध होती है। इसके अतिरिक्त यदि घरों में एक ही ओर खिड़की व दरवाजे हों तो भी वायु सही रूप में इधर–उधर नहीं आ–जा सकती। फलस्वरूप शुद्ध तथा अशुद्ध दोनों ही वायु जब अन्दर जाती है तब वे मिलकर शुद्ध वायु को भी अशुद्ध बना देती है। ऐसे कमरों की वायु सदा ही अशुद्ध होती है। ऐसे वातावरण में रहने वाला व्यक्ति रोगी रहेगा। अतः हमें सदैव ऐसे घर में रहने की चेष्टा करनी चाहिए जहाँ वायु का आवागमन सही हो। प्रत्येक व्यक्ति को प्रति घण्टे अनुमानतः 3000 घन फीट शुद्ध वायु की आवश्यकता होती है। स्कूल, सिनेमाघर, कारखाने, अस्पताल आदि घने स्थानों पर जहाँ तक संभव हो सके खुला वातावरण होना चाहिए। वैसे वायु में स्थित तमाम अशुद्धियों का शुद्धिकरण प्रकृति द्वारा ही हो सकता है। अन्यथा व्यक्ति अधिक जीवित नहीं रह पाता। प्रकृति समय–समय पर सदैव व्यक्तियों की सहायता करती रहती है। वायु को शुद्ध करने की दो विधियाँ हैं :

1. प्राकृतिक विधि
2. कृत्रिम विधि

प्राकृतिक विधि

मनुष्य को सबसे अधिक सहायता प्रकृति से ही मिलती है। हम सक्रिय साधन अपनाने के उपरान्त भी वायु को पूर्णतया शुद्ध नहीं कर सकते। हमारे इस कार्य में प्रकृति अधिक सहायता प्रदान करती है। प्राकृतिक साधन निम्नांकिंत हैं :

1. पेड़–पौधे

पेड़–पौधे वायुमण्डल में ऑक्सीजन तथा कार्बनडाइ आक्साइड का संतुलन बनाये रखते है। ऐसा न हो तो मनुष्य का जीवन दुर्लभ हो जाएगा। पेड़–पौधों के हरे भागों को अपना भोजन सूर्य के प्रकाश में कार्बनडाइ–आक्साइड लेने से ही प्राप्त होता है। अतः वे दिन में कार्बनडाइ आक्साइड ग्रहण करते हैं तथा ऑक्सीजन छोड़ते हैं। इस प्रकार वायु–मण्डल शुद्ध हो जाता है।

2. आँधी

तेज वायु अथवा आँधी जब चलती है तो उसके साथ अशुद्धियाँ उड़कर सारे वायु–मण्डल को समतल बना देती है। आँधी के साथ गन्दे पदार्थ उड़ जाते हैं तथा वायु शुद्ध हो जाती है।

3. वर्षा

वर्षा होने से वायु–मण्डल में से धूल तथा अन्य वस्तुओं के कण पानी के साथ ही पृथ्वी पर आ जाते हैं। हानिकारक गैसों को भी वर्षा सोख लेती है। यही कारण है कि वर्षा के उपरान्त वायु–मण्डल स्वच्छ एवं शान्त हो जाता है। वायु की अशुद्धियाँ जल में मिल जाती हैं तथा वायु शुद्ध हो जाती है।

4. सूर्य का प्रकाश

वायु में स्थित विभिन्न रोगाणु सूर्य की किरणों द्वारा नष्ट हो जाते हैं। इसी कारण घर में आँगन रखे जाते हैं जिससे कि पर्याप्त धूप आ सके। वस्तुओं के सड़ने से जो अशुद्धि हो जाती है, उसे भी धूप नष्ट कर देती है और वातावरण शुद्ध हो जाता है।

5. गैसों का विसरण

विसरण के गुण के कारण भी वायु शुद्ध हो जाती है। दो कमरों में यदि भिन्न–भिन्न गैसें हों और उनके बीच के दरवाजे बन्द हों तो दरवाजे खोलने के उपरान्त यदि हम देखें तो पता चलेगा कि दोनों कमरों में गैसों की समान मात्रा कम होती है तो जहाँ उसकी अधिकता होती है वह वहाँ से आ जाती है।

6. ऑक्सीजन

इसके द्वारा भी रोग के कीटाणुओं का नाश होता है। ओजोन के रूप में तो इसकी प्रबलता और अधिक हो जाती है। क्योंकि यह सड़े–गले पदार्थों अथवा जैवीय पदार्थों द्वारा उत्पन्न वायु की अशुद्धियों को तुरन्त समाप्त कर देती है। इस प्रकार देखा जाय तो उपरोक्त प्राकृतिक साधनों द्वारा वायुमण्डल स्वतः शुद्ध हो जाता है।

कृत्रिम विधि

जिस वायु का हम सेवन करते हैं उसे अशुद्धियों से बचाने हेतु निम्न विधियाँ प्रयुक्त की जा सकती हैं:

1. निवास–स्थान गन्दे वातावरण से दूर होना चाहिए।
2. रसोई आदि से धुआँ बाहर निकालने के लिए चिमनी अवश्य होनी चाहिए।
3. घर से कुछ दूरी पर वृक्ष आदि लगाने चाहिए जिससे धूल के कण वहीं रुक जायें।
4. छूत के रोगों से पीड़ित रोगियों को पृथक रखना चाहिए।
5. सड़कों से धूल के कण न उड़े अतः सड़कें पक्की, कोलतार की या कंकरीट आदि की होनी चाहिए।
6. कारखानों एवं मिलों आदि से घर दूर बनवाना चाहिए।
7. पशु आदि घर पर हों तो उन्हें कमरों से दूर बाँधना चाहिए।

स्वस्थ्य जीवन व्यतीत करने के लिए घरों में शुद्ध वायु का सेवन अत्यन्त आवश्यक है। इसके लिए हमें घर पर ही प्रबन्ध करना चाहिए। अतः घरों में अशुद्ध वायु के निकास का प्रबन्ध अच्छी प्रकार होना चाहिए। श्वसन प्रक्रिया व धुएँ आदि के कारण वायु अशुद्ध हो जाती है। इसी

कारण मकान बनाने वाले इस बात का पूर्ण ध्यान रखते हैं कि घर में सूर्य का प्रकाश पर्याप्त मात्रा में आये तथा शुद्ध वायु का आगमन तथा अशुद्ध वायु का गमन उचित प्रकार हो। इसके लिए घर में खिड़की, दरवाजों व रोशनदानों का प्रबन्ध किया जाता है। सिनेमाघरों, विद्यालयों व मकानों में छत के पास रोशनदानों का निर्माण किया जाता है तथा उसमें पंखें लगा दिये जाते हैं। जिनसे अशुद्ध वायु बाहर फेंक दी जाती है अन्यथा उस स्थान पर इतनी अशुद्ध वायु एकत्र हो जायेगी कि श्वास लेना मुश्किल हो जायेगा। अशुद्ध वायु का बाहर जाना तथा शुद्ध वायु के भीतर आने की प्रक्रिया को संवातन कहते हैं। संवातन विधि से कमरों में निरन्तर शुद्ध, स्वच्छ व शीतल वायु का प्रवेश होता है तथा अशुद्ध, गरम, नमीयुक्त एवं स्थिर वायु का निष्कासन होता है। जब दूषित व स्थिर वायु का कमरे के बाहर निष्कासन होता है तो रोग न होने की सम्भावना होती है और स्वास्थ्य ठीक रहता है। सन्तोषप्रद संवातन के लिए यह आवश्यक है कि शुद्ध वायु का कमरे में प्रवेश हो, निर्धारित तापक्रम पर कमरे में वायु उपस्थित रहे और कमरे की वायु में गतिशीलता बनी रहे।

संवातन का सिद्धान्त

संवातन का सिद्धान्त यह है कि जब हम श्वास बाहर निकालते हैं तो बाहर निकली हुई वायु गर्म होने के कारण हल्की हो जाती है। हल्की होने के कारण ऊपर उठकर छत के किनारे बने रोशनदानों द्वारा बाहर निकल जाती है, उसके स्थान पर शुद्ध वायु खिड़कियों, रोशनदानों तथा दरवाजों आदि द्वारा कमरे में प्रविष्ट होती है। शुद्ध वायु की अधिकता कमरे में रहने के लिए आमने–सामने खिड़की–दरवाजे बनाये जाते हैं। साधारणतया एक व्यक्ति एक घंटे में लगभग 100 घन मीटर वायु ग्रहण करता है। यदि इस वायु का एक घण्टे में तीन बार भी परिवर्तन हो तो एक व्यक्ति के लिए लगभग 33 घन मीटर स्थान की आवश्यकता पड़ती है। इस दृष्टि से घरों के अन्दर लम्बे–चौड़े तथा ऊँचे कमरे बनाने चाहिए।

संवातन के साधन

संवातन अत्यन्त प्रभावशाली एवं स्वास्थ्यवर्द्धक होता है। संवातन अच्छा होने के लिए कमरे में पारगामी संवातन की व्यवस्था होना आवश्यक है। इस कारण कमरे में वायु प्रवेश–निकास के लिए और ताजी व शुद्ध वायु के प्रवेश के लिए खिड़कियाँ एवं दरवाजे आमने–सामने की दीवार में स्थित होने से कमरे की वायु का शुद्धिकरण सुगमता से होता है।

प्रायः यह देखा गया है कि कमरे के दरवाजों का निर्माण मनुष्य एवं वस्तुओं के आवागमन की सुविधा के लिए किया जाता है। किन्तु इनका प्रयोग संवातन हेतु अधिक महत्वपूर्ण है। अतः संवातन की दृष्टि से कमरे में खिड़कियों, दरवाजों एवं रोशनदानों का निर्माण पर्याप्त संख्या में होना चाहिए और उनकी स्थिति आमने–सामने हो, जिससे पारगामी संवातन की समुचित व्यवस्था हो सके। कमरे में वायु प्रवेश एवं निर्गमन के निम्नांकित प्रमुख साधन हैं:

1. खिड़कियाँ एवं दरवाजे

कमरे में खिड़कियाँ एवं दरवाजों का होना अत्यन्त आवश्यक है। पारगामी संवातन की दृष्टि से खिड़कियाँ कमरे के फर्श से लगभग एक मीटर की ऊँचाई पर निर्मित होनी चाहिए जिससे बेड पर लेटे व्यक्ति का गर्म एवं ठण्डी हवाओं से बचाव हो सके। खिड़कियों का क्षेत्रफल, कमरे के क्षेत्रफल का 1/5 भाग होना चाहिए।

2. रोशनदान

कमरे से दूषित वायु को बाहर निकालने के लिए रोशनदान सर्वोत्तम साधन है। कमरे की अशुद्ध वायु हल्की होकर ऊपर उठती है और रोशनदान द्वारा बाहर निकल जाती है। रोशनदान कमरे की दीवारों के ऊपर छत की ओर होना चाहिए, ताकि दूषित वायु सुविधापूर्वक बाहर निकल सके। खिड़कियों की भाँति रोशनदान प्रकाश देने का भी उत्तम साधन है। इसके द्वारा सूर्य की किरणें कमरे के भीतर प्रवेश करती हैं जिनके द्वारा कमरे में उपस्थित हानिकारक कीटाणुओं का विनाश भी होता है।

3. चिमनी

कमरों में चिमनी का होना भी संवातन में सहायक होता है। प्रायः इनका निर्माण रसोई घरों में ही किया जाता है जिससे ईंधन के जलने से उत्पन्न धुएँ को बाहर निकाला जा सके। चिमनी का प्रयोग अधिक किया जाना चाहिए। कमरे की दूषित वायु गर्म व हल्की होकर ऊपर उठती है और चिमनी द्वारा बाहर निकल जाती है। चिमनी से निकली वायु का स्थान ग्रहण करने के लिए शुद्ध एवं ताजी वायु खिड़की तथा दरवाजे से कमरे में प्रवेश करती है। इस प्रकार दूषित वायु का कमरे में एकत्रीकरण नहीं होता और वह स्वयं बाहर निकलती रहती है। चिमनी कमरे की उष्ण, नम एवं सान्द्र वायु को बाहर निकालने में सहायता प्रदान करती है और संवातन–प्रक्रिया द्वारा कमरे की समस्त वायु शीघ्रता से शुद्ध हो जाती है।

कृत्रिम संवातन द्वारा वायु का शुद्धिकरण

कृत्रिम संवातन यांत्रिक उपकरणों पर निर्भर करता है, जो विद्युत की सहायता से अपना कार्य करते हैं। यान्त्रिक साधनों का प्रयोग निम्नलिखित तीन विधियों द्वारा किया जाता हैः

1. निर्वातन पद्धति :

इस पद्धति के अन्तर्गत कमरे की दूषित वायु बिजली के पंखों द्वारा बाहर निकाल दी जाती है। इन बिजली के पंखों को निर्वातक पंखा कहते हैं। इस पद्धति का प्रयोग सिनेमाघरों, अस्पतालों और प्रयोगशालाओं आदि में किया जाता है जहाँ दूषित वायु, गैसों की दुर्गन्धता तथा गैसों का धुँआ शीघ्र एकत्रित हो जाता है। इस पद्धति को वायु बाहर खींचने की पद्धति कहते हैं।

2. प्लीनम पद्धति

इस पद्धति के अर्न्तगत स्वच्छ एवं ताजी वायु को धक्का देकर बाहर से भीतर की ओर धकेला जाता है। इस पद्धति का प्रयोग विशेषकर अस्पतालों में किया जाता है। इसका सर्वाधिक उपयोग मौसम के अनुसार वायु का तापक्रम बनाने के लिए किया जाता है। इस पद्धति से वायु की गति अधिक संवहनशील हो जाती है और दूषित वायु को शीघ्र ही बाहर निकाल देती है। विद्युत चलित पंखे इस पद्धति के प्रमुख यांत्रिक साधन हैं।

मिश्रित पद्धति

इस पद्धति का प्रयोग विशाल भवनों के लिए किया जाता है। इसमें उपरोक्त दोनों पद्धतियों का मिला–जुला प्रयोग किया जाता है। निर्वातक पंखों के प्रयोग से दूषित एवं गर्म वायु भवन से बाहर धकेल दी जाती है और छत तथा दीवार के पंखों से वायु को गति प्रदान कर इसे शीतल बनाया जाता है।

वातानुकूलन

संवातन की यह नवीनतम पद्धति है। इसमें बाहर से आई हुई शुद्ध वायु को विभिन्न प्रक्रियाओं से गुजरना पड़ता है। इसमें वायु में उचित तापमान वांछित स्वच्छ तथा उपयुक्त आर्द्रता उत्पन्न की जाती है। इससे दूषित वायु को यन्त्रों द्वारा खींच लिया जाता है और पुनः यन्त्रों द्वारा उसे स्वच्छ, शीतल एवं श्वसन क्रिया के योग्य बनाकर भवन में प्रविष्ट कराया जाता है। यह विधि अत्यन्त मंहगी है। इसी कारण इसका प्रयोग धनी लोग ही कर पाते हैं। अधिकांशतः इसका प्रयोग धनी व्यक्तियों के भवनों, प्रयोगशालाओं, सिनेमागृह, रेल के डिब्बों तथा विशिष्ट कल–कारखानों में किया जाता है।

प्रायः यह देखा गया है कि स्वस्थ जीवन व्यतीत करने के लिए घरों में शुद्ध वायु का रहना अत्यन्त आवश्यक है तथा वायु की शुद्धिकरण के लिए प्राकृतिक तथा कृत्रिम दोनों विधियों का प्रयोग करना चाहिए। क्योंकि व्यक्ति शुद्ध वायु ग्रहण करके पूर्णतया स्वस्थ रह सकता है तथा अशुद्ध वायु में रहने से हृदय गति धीमी हो जाती है, दम घुटता है। अतः हम कह सकते हैं कि स्वस्थ रहने के लिए शुद्ध वायु की जरूरत है।

सन्दर्भ

1. मार्डन गृह विज्ञान – डॉ० जगदम्बा शर्मा
2. गृह विज्ञान – डॉ० प्रमिला वर्मा

गर्भावस्थाः आहार एवं विहार

सरिता कुमारी*

नारी अर्थात् विश्वजननी जिसने विश्व का विकास कर उसे एक सुन्दर पुष्प की भाँति कई खुशबुओं में महकाया, जिसने पुरूष जीवन को कई रंगों से सजाकर उसे एक सुन्दर रूप प्रदान किया। कहते हैं कि ईश्वर हर जगह नहीं हो सकता इसलिए उसने माँ बनाई, जो ईश्वर की सबसे अमूल्य संरचना है। वो माँ ही है, जो जन्म मरण तक परिवार की खुशियों के लिए परित्याग ही करती रहती है परंतु फल की इच्छा नहीं करती। किसी महिला को माँ के दर्जे तक पहुँचाने वाले गर्भावस्था के नौ महीने बड़े महत्वपूर्ण होते हैं। इन दिनों, वह क्या सोचती है, क्या करती है, क्या पढ़ती है, ये तमाम चीजें मिलकर आनेवाले बच्चे की सेहत और व्यक्तित्व को तय करते हैं।

माँ बनने की सही उम्र

माँ बनने की लिए 20-30 साल की उम्र सबसे सही होती है। लेकिन आजकल बड़ी संख्या में महिलाएं कैरियर की वजह से 32-33 साल की उम्र में माँ बनना पसंद कर रही हैं। उन्हें अपना ज्यादा ध्यान रखना चाहिए। शुरू से ही किसी स्त्री एवं प्रसूति रोग विशेषज्ञ की देखरेख में रहना चाहिए। किसी सरकारी स्वास्थ्य केन्द्र में नियमित जाँच करानी चाहिए। 35 साल के बाद गर्भधारण करने से बचना चाहिए। इससे माँ और बच्चा, दोनों को दिक्कतें आ सकती हैं।

उम्र बढ़ने के साथ महिलाओं में चिकित्सकीय समस्याएं जैसे कि हाइपरटेंशन, उच्च रक्तचाप, मधुमेह आदि की परेशानी आने से बच्चे की सेहत पर बुरा असर पड़ सकता है। बच्चे में डाउन सिंड्रोम (मंगोल बेबी) हो सकता है, यानि बच्चे का मानसिक विकास अवरूद्ध होने का खतरा हो सकता है तथा प्रसव के समय भी परेशानी होती है।

सेहतमंद माँ यानि कि सेहतमंद बच्चा

गर्भावस्था का समय नौ महीने तक का होता है। यही वह समय होता है जब भ्रूण माँ के गर्भ में विकसित होना शुरू होता है, जिसके बढने के लिए प्रचुर मात्रा में सही पोषण की आवश्यकता होती है। गर्भावस्था के दौरान माँ का वजन 8 से 10 किलोग्राम तक बढ़ना चाहिए। यदि होने वाली माँ का वजन और सेहत ठीक होगी, तो बच्चा भी सेहतमंद होगा। माँ में हीमोग्लोबिन की मात्रा कम नहीं होना चाहिए। यदि माँ का वजन ज्यादा है, तो उसे ज्यादा वजन बढ़ाने से बचना चाहिए। वैसे गर्भावस्था के शुरू के कुछ महीनों में बच्चे की वृद्धि कम ही रहती है, जबकि बाद के महीनों में बच्चा तेजी से बढ़ता है। उस वक्त माँ को ज्यादा कैलोरी की जरुरत पड़ती है।

*तकनीकी सहायक, क्लिनिकल प्रयोगशाला (आर0 बी0 एम0), राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण संस्थान, नई दिल्ली।

गर्भावस्था के दौरान कुछ शारीरिक बदलाव

(1) 0-3 महीने

- गर्भावस्था के दौरान माँ के शरीर में कुछ बदलाव होते हैं जो कि सामान्य कहे जा सकते हैं, जैसे कि गर्भाशय और उसकी सहयोगी मांसपेशियों का बढ़ना भ्रूण के विकास को दर्शाता है।
- स्तनपान के लिए स्तनों के आकार का बढना।
- हार्मोन के साथ-साथ खाने के स्वाद और त्वचा में भी बदलाव आने लगते हैं, जिससे माँ का स्वभाव भी तेजी से बनने-बिगड़ने लगता है।
- प्रातःकाल कमजोरी, मितली और उल्टी की शिकायत भी सबसे ज्यादा इसी वक्त होती है।
- इस दौरान पाचन क्रिया में बदलाव आता है, क्योंकि एसिड और पचनीय जूस के कारण पेट भोजन को सही से नहीं पचा पाता, जिससे कई परेशानियॉ होती हैं, जैसेः उल्टी होना, पेट में गैस बनना इत्यादि।
- इस वजह से आमतौर पर महिला का वजन कम हो जाता है इसलिए घबराएं नही। ऐसी स्थिति में महिला को हर वह चीज खाने की सलाह दी जाती है जो उसे पसन्द आए। दिनभर में चार या पाँच बार तरल चीजें लेनी चाहिए, जैसे - छाछ, नीबू-पानी, नारियल-पानी, जूस व शेक आदि। इससे शरीर में पानी की कमी नहीं होती है।

(2) 3-6 महीने

- आमतौर पर 3 से 6 महीने गर्भावस्था के सबसे आसान महीने होते हैं। इस समय तक माँ का शरीर बदलावों के साथ समायोजन कर चुका होता है।
- त्वचा चमकने लगती है। इस समय पौष्टिक आहार लेना अति आवश्यक होता है।

(3) 6-9 महीने

- 6 से 9 महीने के दौरान बच्चे का शरीर तेजी से बढ़ने लगता है, अतः माँ को ज्यादा कैलोरी लेनी चाहिए। इन तीन महीनों में भोजन पर अधिक ध्यान देना चाहिए।
- इस दौरान पेट बढ़ जाता है, अतः सांस लेने में दिक्कत महसूस होती है।
- पैरों में सूजन और कमजोरी आ सकती है, इसलिए ज्यादा देर तक पैर लटकाकर नहीं बैठना चाहिए।
- कई बार त्वचा में रूखापन आने लगता है और खुश्की तथा खुजली बढ़ जाती है। इससे बचाव के लिए साफ-सफाई का पूरा ध्यान रखना चाहिए और कोई अच्छी क्रीम या नारियल का तेल लगाना चाहिए।

गर्भवती महिला का आहार

माँ और बच्चे दोनों की सेहत काफी हद तक पौष्टिक आहार पर निर्भर करती है। इस दौरान माँ के खाने पीने की आदतों में काफी बदलाव होता है। ऐसे में प्रोटीन, कैल्शियम और आयरन से भरपूर चीजें ज्यादा खानी चाहिए जैसे कि दालें, फली, सोयाबीन, दूध-दही, पालक, गुड, अनार, चना, मुरमुरा आदि। फल और हरी पत्तेदार सब्जियाँ खूब खानी चाहिए। शरीर में पानी की कमी बिल्कुल नहीं होनी चाहिए अतः नीबू-पानी, नारियल-पानी व जूस अधिक मात्रा में पीना चाहिए। बच्चे के मस्तिष्क के विकास के लिए ओमेगा-3 और ओमेगा-6 फैटी एसिड बहुत जरूरी है। फिश लिवर ऑयल, ड्राइफ्रूट्स, हरी पत्तेदार सब्जियों और सरसों के तेल में ये अच्छी मात्रा में मिलते हैं। लेकिन कम आय के कारण न जाने कितनी ही गर्भवती स्त्रियाँ ऐसी होती हैं जो पौष्टिक आहार से वंचित रह जाती हैं जिसके कारण उन्हें न जाने कितनी ही परेशानियों का सामना करना पड़ता है। लेकिन कम आय के आधार पर भी पौष्टिक आहार लिया जा सकता है बस जरुरत है, थोड़ी सी जागरूकता और सही सलाह की। कम खर्चे में आने वाला पौष्टिक आहार भी हैं, जैसे कि अनाज में ज्वार , बाजरा, मक्का और चावल आदि तथा कंदमूल जैसेः आलू, शकरकंदी, मूली, गाजर आदि। कम कीमत वाली दाल और अनाज को मिलाकर भी पौष्टिक आहार बनाया जा सकता है, जैसेः खिचडी, दलिया, पोहा आदि तथा दाल और चने आदि को अंकुरित करके भी पौष्टिक आहार बनाया जा सकता है ।

गर्भवती स्त्री और उसके होने वाले बच्चे के लिए आयरन अति आवश्यक है। अतः अतिरिक्त आयरन के लिए आयरन की गोलियाँ भी खानी आवश्यक हैं जो किसी भी प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र या सरकारी अस्पताल में मुफ्त में मिलती हैं।

ये जाँच भी जरुरी

- माँ बनने वाली महिला की सेहत के मुताबिक चिकित्सक जाँच कराते हैं फिर भी हीमोग्लोबिन, वी.डी.आर.एल., ब्लड ग्रुप, ब्लड शुगर, मूत्र जाँच और एचआईवी जाँच अवश्य कराना चाहिए। ये हर तीन महीनों में कराए जाते हैं।
- अल्ट्रासाउंड आमतौर पर दो बार कराया जाता है। दूसरे महीने में बच्चे की धड़कन जानने के लिए, चौथे या पाँचवे महीने में बच्चे का विकास एवं अंदरूनी विकार देखने के लिए और आखिरी महीने में भी जरूरत पड़ने पर अल्ट्रासाउंड कराया जा सकता है।
- हाइपोथॉयराइड और थैलसीमिया के लिए भी जांच कराई जाती है। अगर माता-पिता में थैलसीमिया के लक्षण होते हैं तो बच्चे के इससे पीड़ित होने की भी आशंका 25 फीसदी तक हो सकती है। जांच में अगर बच्चा प्रभावित पाया जाता है तो गर्भपात करना ही बेहतर होता है। चौथे और पाँचवें महीने या पाँचवें और छठे महीने में माँ को टिटनेस का टीका लगाया जाता है।

उच्च जोखिम गर्भावस्था

मधुमेह (डायबिटीज)

- माँ बनने जा रही महिलाओं के लिए डायबिटीज एक बड़ी परेशानी हो सकती है। जो पहले से डाइबिटीज से पीड़ित हैं उन्हें शुगर लेवल सामान्य आने पर गर्भधारण करना चाहिए। जिन महिलाओं के माता-पिता मधुमेह से पीड़ित हैं उन्हें गर्भधारण करने से लेकर प्रसव तक खासतौर पर सचेत रहना चाहिए।
- सामान्य गर्भावस्था में भी इंसुलिन की कार्यक्षमता 15 फीसदी कम हो जाती है, ऐसे में सेहतमंद महिलाओं में भी इस दौरान डायबिटीज (जेस्टेशनल डायबिटीज) होने के मामले बड़ी संख्या में सामने आ रहे हैं।
- गर्भधारण के दौरान शुगर नियंत्रण में रखना चाहिए क्योंकि दूसरे या तीसरे तिमाही में शुगर ज्यादा होती है तो बच्चे का आकार बड़ा हो सकता है, जिसकी वजह से सिजेरियन करना पड़ सकता है और अन्य विकृतियाँ भी हो सकती हैं।

एड्स

गर्भवती महिला को अपना एचआईवी टेस्ट जरूर करवाना चाहिए। अगर माँ एचआईवी पॉजिटिव है या उसे एड्स है तो बच्चे के पॉजिटिव होने की एक तिहाई आशंका होती है। ऐसी महिलाओं को गर्भावस्था के दौरान डॉक्टर की देखरेख में रहना चाहिए।

उच्च रक्त चाप

अगर माँ को हाइपरटेंशन है तो बच्चे के विकास में बाधा पड़ सकती है और वह काफी कमजोर हो सकता है। प्री-मैच्योर डिलीवरी की आशंका भी बढ़ जाती है। अतः, समय-समय पर रक्त चाप की जाँच कराते रहना चाहिए।

हाइपोथॉयरायडिज्म

हाइपर और हाइपो, दोनों तरह के थॉयरायडिज्म में बच्चे के मानसिक विकास पर असर पड़ सकता है अतः समय पर जाँच कराते रहना चाहिए।

पीलिया

अगर माँ को पीलिया है तो प्रसव से पहले ही ब्लीडिंग (रक्तस्राव) हो सकती है। ऐसे में आयरन की गोलियाँ सही समय पर लेते रहना चाहिए और स्वास्थ्य केन्द्र पर हीमोग्लोबिन और अन्य जरूरी जाँच जरुर कराते रहना चाहिए और प्रसव (डिलीवरी) हमेशा अस्पताल में ही कराएं।

निष्कर्ष

यही वे नौ महीने हैं जो एक गर्भवती स्त्री के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं इसलिए न केवल एक माँ बनने वाली स्त्री की जिम्मेदारी बनती है बल्कि उसके परिवार के सदस्यों एवं आस-पास रहने वालों का भी यह कर्तव्य होता है कि वे ऐसी गर्भवती स्त्री का पूरा ख्याल रखें क्योंकि एक स्वस्थ माँ ही एक स्वस्थ बच्चे को जन्म दे सकती है जो सिर्फ उसका ही नहीं बल्कि देश का भी स्वस्थ भविष्य होगा।

मध्य वर्गः अवधारणा एवं स्वरूप

डॉ. राजेश कुमार*

मानव समाज आदिकाल से ही विविधताओं से भरा हुआ है। स्वभाव, प्रवृत्ति तथा रहन-सहन में भिन्नता होने के कारण स्वाभाविक रूप से समाज में वर्गगत विभेद दिखाई पड़ता है। प्रारम्भ से ही हम देखते हैं कि समाज साफ-साफ दो वर्गों 'उच्च' एवं 'निम्न' में विभाजित था, किन्तु आधुनिक युग में स्पष्ट रूप से हमारे समाज में मध्यवर्ग भी उभकर सामने आता है, जो औद्योगिक क्रांति का परिणाम है। समाज में मध्यवर्ग की परिकल्पना यद्यपि वैज्ञानिक अरस्तु ने आज से लगभग 2500 वर्ष पूर्व अपनी पुस्तक 'पॉलिटिक्स' में की थी, तथापि वर्तमान युग में एक विशिष्ट सामाजिक प्रक्रिया के रूप में कार्ल मार्क्स ने स्थापित किया। भारत में मध्यवर्ग का उदय 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में हुआ था।

आज हम जिस नए भारतीय मध्यवर्ग की बात करते हैं और जिस पर पिछले कई दशकों से सारी दुनिया की निगाहें टिकी हुई हैं, कार से लेकर कपड़ों, घड़ी, शराब से लेकर सौन्दर्य प्रसाधनों, पेप्सी-पिज्जा, कुरकुरे से लेकर लैपटॉप और मोबाइल बनाने वाली विदेशी कंपनियाँ जिसकी खिदमत में हर रोज नए ब्रांड, नए प्रोडक्ट और नए विज्ञापनों के साथ बाजार में उतर रही हैं, जरा उसके चरित्र और चेहरे को तो पहचान लें। बिना उसका 'आई कार्ड' यानी पहचान-पत्र देखे उसके बारे में विश्वासपूर्वक बात नहीं की जा सकती। यह नया हिंदुस्तानी मध्यवर्ग कितना देशी है, कितना विदेशी और कितना 'ग्लोबल' इसका पता उसके जन्म प्रमाण-पत्र को देखने से चलेगा।

पुराना मध्यवर्ग अगर वैज्ञानिक और उद्यमी था तो नया मध्यवर्ग सट्टेबाज और 'स्पिरिचुअल' है। पुराने मध्यवर्ग के राजरोग टी.बी., कैंसर और प्लेग थे, तो इस नए मध्यवर्ग के राजरोग में एड्स, हैपेटाइटिस और कोलस्ट्रॉल की बढ़ोतरी है।

समाज के मध्यवर्ग का अभिप्राय शोषक और शोषित के मध्य होने वाले संघर्ष के परिणामस्वरूप निर्मित वर्ग से है। अंग्रेजी शासन काल में इस वर्ग में काफी वृद्धि हुई है। मध्यवर्ग का अभिप्राय किसी जाति, धर्म और वर्ग-विशेष से नहीं है, अपितु इसकी निर्मिति का आधार पूर्णतः आर्थिक है। मध्यवर्ग एक ऐसा वर्ग है जो मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक सभी कारणों से दूसरे वर्गों से भिन्न है। यह समाज का महत्वपूर्ण वर्ग है। संसार के सभी राष्ट्रों में मध्यवर्ग की भूमिका गणनीय है। अतः मध्यवर्ग समाज का वह वर्ग है, जो समाज को प्रेरित करता है और सतत् संघर्षरत भी रहता है और उसके सोच-सरोकार निजी होते हैं।

डॉ. बच्चन सिंह ने मध्यवर्ग की स्थिति को स्पष्ट करते हुए लिखा है, ''मध्यवर्ग की पूरी परिधि जिसमें उच्च-मध्यवर्ग, मध्यवर्ग और निम्न-मध्यवर्ग तीनों का समावेश देखा जाता है। आर्थिक एकरूपता के अभाव में इनके स्वार्थों में पर्याप्त संघर्ष दिखाई पड़ता है। आर्थिक विभिन्नता

* हिन्दी विभाग, कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरूक्षेत्र, हरियाणा

के परिणामस्वरूप इनकी मर्यादा के घेरे भी अलग-अलग हैं। पारिवारिक और सामाजिक मर्यादा तथा आर्थिक अनिश्चितता की चक्की में दो पाटों के बीच यह वर्ग बराबर पिसता रहता है। कौटुम्बिक और सामाजिक मर्यादा इसका ऊपरी पाट है तो आर्थिक असंतुलन चक्की का निचला पाट है।

अज्ञेय ने मध्यवर्ग की विशेषताओं को प्रकट करते हुए कहा है - ''साफ-सुथरा घर, बिना झंझट के खाना-सोना, छोटा सा बैंक-बैलेंस और दिल बहलाने की साधारण सहूलियतें।''

अरस्तु ने कहा है ''प्रत्येक राज्य में तीन वर्ग होते हैं - एक अत्यधिक धनी वर्ग होता है, दूसरा अत्यधिक गरीब और तीसरा वर्ग मध्यम वर्ग होता है। मध्यम वर्ग तीनों वर्गों में उत्तम है, क्योंकि यह वर्ग बुद्धिसंगत सिद्धांतों पर चलता है। जो व्यक्ति सौंदर्य, शक्ति, कुलीनता या धन-दौलत की दृष्टि से उत्तम है, वह बुद्धिसंगत विवेकपूर्ण सिद्धांतों पर नहीं चल सकता। वह या तो उग्र भयंकर अपराधकर्मी हो जाता है या फिर धूर्त, दुष्ट और बदमाश बन जाता है।

मैक्स बेबर ने मध्यवर्ग को सामाजिक वर्ग कहा है। बेबर के अनुसार - ''प्रथम सम्पत्तिवान वर्ग, द्वितीय सम्पत्तिहीन वर्ग और तृतीय सामाजिक वर्ग में अंतिम को अपने सामर्थ्य से किसी भी वर्ग में शामिल होने की स्वतंत्रता मानी है। संपत्ति के आधार पर सामाजिक वर्ग के भी पुनः दो उपवर्ग स्वीकार किये हैं - उच्च-मध्यवर्ग और निम्न-मध्यवर्ग।'' इंग्लैंड की औद्योगिक क्रांति, फ्रांस की राज्यक्रांति और रूसी समाजवादी क्रांति ने विश्व की आर्थिक व्यवस्था पर काफी प्रभाव डाला है। वर्तमान समाज आर्थिक दृष्टि से तीन वर्गों या तीन श्रेणियों में विभक्त है। उच्चवर्ग, मध्यवर्ग तथा निम्नवर्ग। उच्च तथा निम्नवर्ग शोषक तथा शोषित तथा पूंजीपति और श्रमिक के नाम से भी जाने जाते हैं। संसार के सभी पूंजीवादी देशों में उक्त तीनों श्रेणियाँ विद्यमान हैं। शोषित श्रेणी या निम्न वर्ग जिसे उत्पादन के लिए व्यवहार में लाया जाता था और शोषक श्रेणी जो साधनहीन लोगों को अपनी इच्छा से उत्पादन के काम में प्रयोग करती थी। विकसित पूंजीवाद के युग में मध्यम श्रेणी की स्थिति को समझने के लिए यह याद रखना आवश्यक है कि श्रेणियों का विभाजन और संगठन उनकी आर्थिक स्थिति से होता है।

आधुनिक युग में वर्ग की भावना को एक विशिष्ट सामाजिक प्रक्रिया का रूप देने का श्रेय महान चिंतक एवं विचारक कार्ल मार्क्स को है। मार्क्स के अनुसार आदिम समाज में वर्ग भावना या श्रेणी भेद नहीं था, क्योंकि उत्पादन इतना कम होता था कि मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति ही कर सकते थे, बचाना उनके लिए असंभव बात थी। धीरे-धीरे उत्पादन की वृद्धि के साथ लोगों ने सम्पत्ति बनाना प्रारंभ किया और इस प्रकार वैयक्तिक संपत्ति की भावना जैसे-जैसे प्राणियों में बढ़ती गई वैसे ही वर्गों की भावना भी समाज में बढ़ती गई। व्यक्तिगत संपत्ति की रक्षा में व्यक्तिगत संघर्ष हुए और इस प्रकार से समूहगत हितों की रक्षा के लिए वर्ग संघर्ष प्रारम्भ हुआ। वर्ग संघर्ष की इस मूल भावना को शाश्वत मानकर कार्ल मार्क्स ने कहा है - ''अभी तक घटित सभी समाजों का इतिहास वर्ग संघर्ष का इतिहास है।''

इस प्रकार मध्यवर्ग समाज का एक ऐसा महत्वपूर्ण वर्ग है, जिसकी स्थिति प्रत्येक देश और प्रत्येक समाज में विद्यमान रहते हुए भी उसे अपने परिवेश के अनुरूप विभिन्न रूपों में देखा जा सकता है।

समाज में व्यक्ति का स्थान उसके आर्थिक स्तर द्वारा निश्चित होता है। इसी सामाजिक स्थान के आधार पर मध्यवर्ग की सीमा में सभी जाति और वर्ग के लोग आ जाते हैं। अर्थ की प्रधानता होते हुए भी केवल अर्थ ही मध्यवर्ग का मापदण्ड है, ऐसा नहीं माना जा सकता। इसके और भी पहलू हैं। मध्यवर्ग की चर्चा करते हुए डॉ. बलजीत सिंह ने लिखा है - ''मध्यवर्ग में केवल नियोजक ही नहीं अपितु कई कार्यकर्ता होते हैं, जिनमें कुछ स्वतंत्र अथवा आत्मनिर्भर रूप से काम करने वाले, कुछ व्यापारी और ग्राहक, कुछ संपत्तिशाली और कुछ निर्धन होते हैं। इस वर्ग के लोगों की आय औसत दर्जे की होती है तथा कुछ लोग ऐसे भी होते है, जिनकी कोई आय नहीं होती।''

प्रत्येक देश और समाज में मध्यवर्ग का अस्तित्व किसी न किसी रूप में अवश्य विद्यमान रहता है, पर अंतर केवल उस विशिष्ट समाज के गठन और परिस्थितियों पर निर्भर करता है। मध्यवर्ग का स्वरूप देशकाल और सीमा के अनुरूप परिवर्तित होता रहता है।

आधुनिक भारत में मध्यवर्ग के उद्‌भव और विकास का दायित्व अंग्रेजी साम्राज्य पर है। अंग्रेजों के आगमन से पूर्व भारतीय गाँव आर्थिक दृष्टि से इकाई होते थे, पर अंग्रेजी शासन ने भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर कड़ा प्रहार किया। भारतीय उद्योगों का व्यापार पूर्ण रूप से नष्ट कर दिया। भारत का कच्चा माल ब्रिटेन जाने लगा। भारत को लूट कर ही आधुनिक इंग्लैंड का निर्माण हुआ। इस प्रकार भारत का धन विदेश चला जाता था। अंग्रेजों की औद्योगीकरण की नीति ने किसानों और मजदूरों को शहरों की ओर आकर्षित किया। अंग्रजों द्वारा न केवल भारत के परम्परागत उद्योगों का ही नाश किया गया, बल्कि ब्रिटिश साम्राज्य के खर्च के लिए कर भी लगाए गए। जमींदारी व्यवस्था से पूंजीवादी कानून व्यवस्था लागू कर दी गई। सस्ती मजदूरी और युद्धकालीन परिस्थितियों के परिणामस्वरूप अंग्रेजों ने भारत में कारखाने खोले, जिससे मध्य तथा निम्न वर्ग की स्थिति दयनीय हो गई। अंग्रेजों के आगमन से पूर्व के भारतीय मध्यवर्ग के स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए डॉ. नासिर अहमद खाँ लिखते हैं - ''समाज के उच्च स्तर के व्यक्तियों में राजगुरू, क्षत्रिय राजा और उसके अभिकर्ता सम्मिलित थे। इन व्यक्तियों में ब्राह्मण, अध्यापक, उपदेशक, क्षत्रिय, शूरवीर और राजनीतिक नेता भी थे। कुछ ऐसे भी व्यक्ति थे जो शासन व्यवस्था में सहायता करते थे। ये सभी व्यक्ति मध्यवर्ग के ही थे। इन व्यक्तियों में वैश्य जाति के लोग शामिल थे जो विशेषकर सौदागर, पूंजीपोषक और औद्योगिक थे। सामंत युग में उच्च और मध्यवर्ग के व्यक्ति बढ़ते गए।''

ब्रिटिश शिक्षा-नीति मध्यवर्ग के विकास में उत्तरदायी है। इस संबंध में ए.आर.देसाई लिखते हैं - ''अंग्रजों ने भारत में नवीन शिक्षा-पद्धति का सूत्रपात किया, जिसके फलस्वरूप शिक्षित मध्यवर्ग का निर्माण हुआ। उस वर्ग में वकील, डॉक्टर, टेक्नीशियन, प्रोफेसर, पत्रकार, राज्य कर्मचारी, क्लर्क, विद्यार्थी और अन्य व्यक्ति सम्मिलित थे।''

भारतीय मध्यवर्ग पूंजी के विकास के पक्ष में था। अतः व्यावसायिक मध्यवर्ग के साथ व्यापारी मध्यवर्ग भी मिलकर काम करने लगा। इन मध्यवर्गीय व्यक्तियों को अंग्रेजी शिक्षा से इतना पता लग चुका था कि उनके हित में प्रजातंत्रात्मक व्यवस्था ही उत्तम है। 1885 में राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना के बाद मध्यवर्गीय व्यक्ति कांग्रेस में सम्मिलित होने लगे। यह मध्यवर्ग सुधारवादी दृष्टिकोण से पंचायतों तथा पंचों की तानाशाही को समाप्त करने में भला देखने लगा। पंच अपना दबदबा बनाए रखने के लिए विदेश जाकर लौटने वालों को जाति से बाहर निकाल देते थे पर धीरे-धीरे वे झुकने लगे। विलायत से लौटने वालों को सरकारी नौकरी आदि से जो सम्मान मिलता उसके सम्मुख जाति पंचायतों के पंच कुछ न कर पाते।

आर्थिक, सामाजिक समस्या से उद्‌भूत रोजी और रोटी की समस्या ने मध्यवर्ग को नितांत स्वार्थी बना दिया। नन्ददुलारे वाजपेयी के शब्दों में - ''हमारे समाज का नया मध्यवर्ग परिवार की मर्यादा और स्तर कायम रखने तथा रोजी कमाने में ही सारी शक्ति लगा रहा है। इस वर्ग की राष्ट्रीय चेतना के ह्रास के साथ उसकी नैतिक शक्ति भी बहुत कुछ क्षीण होने लगी है। लोग अपने से ऊँचे स्तर के व्यक्ति को देखते हैं। उनमें किसी प्रकार का चारित्रिक उत्कर्ष, त्याग की भावना तथा अन्य उच्चादर्श न पाकर स्वयं भी उसी जीवन-शैली को अपनाने को प्रेरित हो रहे हैं।''

आज परिवर्तन के लिए व्याकुल मध्यवर्ग असंतोष, आक्रोश, विवशता व घुटन में जी रहा है। इसलिए उसमें धुरीहीनता की विडम्बना आ जाती है। वह न चाहकर भी जीविका के लिए अपनी स्वतंत्रता बेच देता है और एक मिथ्या चेतना का रूप धारण करता है। वह सत्ता और शासन के भय से अपने विचारों की आस्था छिपाता है। महत्वाकांक्षाओं ने मध्यवर्ग के लोगों को इतना जकड़ रखा है कि ये यथार्थ के धरातल से उठकर कल्पना के आकाश में तैरने लगते हैं।

अतः कहा जा सकता है कि वर्तमान में मध्यवर्ग सामाजिक मान्यताओं, राजनीतिक चेतना तथा आर्थिक विषमताओं के मध्य उलझा हुआ है। समाज और व्यक्ति का संघर्ष निरंतर बढ़ता जा रहा है। आज की विषम परिस्थितियों में एक ओर मध्यवर्ग रूढ़ियों व संस्कारों में जकड़ा हुआ है, तो दूसरी ओर प्रगतिशील समाजवादी विचारधारा एवं सामाजिक क्रांतियों का सूत्रधार भी बना हुआ है। अतः जब तक मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी वर्ग व्यवस्था तथा उच्च वर्ग से अपना संबंध तोड़कर, सर्वहारा तथा निम्न-मध्यवर्ग के साथ सक्रिय होकर, वर्ग-संघर्ष हेतु सहयोग नहीं देता, तब तक उसका कोई विशेष अवदान नहीं है। स्वतंत्रता का शंखनाद बहुत अपेक्षित है इसलिए जन-जागरण एवं स्वरूप उद्‌बोधन से एक विशिष्ट व्यवस्था का निर्माण करना होगा। अगर आर्थिक विकास को नैतिक जागरण से जोड़ना है तो मध्यवर्ग को अपने वैयक्तिक स्वार्थों से ऊपर उठकर, सक्रिय धरातल पर उपेक्षित समाज को संगठित करना होगा।

संदर्भ

1. कुमार राजेश, (2007) 'उदय प्रकाश के कथा-साहित्य में मध्यवर्गीय चेतना' पृ.1 पृ. 32
2. उदयप्रकाश, 'मध्यवर्ग का आई कार्ड' दैनिक भास्कर, (रसरंग), रविवार, 15 मई, 2005
3. 'आलोचना' - (उपन्यास विशेषांक), अक्टूबर - 1954, पृ.127
4. 'अज्ञेय' नदी के द्वीप, पृ. 49
5. अरस्तु, पॉलिटिक्स, 193, पृ. 190
6. मैक्सबेबर सोशल एण्ड इकोनोमिक आर्गेनाइजेशन, पृ.20
7. मार्क्सवाद, यशपाल, पृ.173
8. कार्ल मार्क्स एंजेल्स, मेनिफेस्टो ऑफ द कम्युनिस्ट पार्टी,पृ. 173
9. द्रष्टव्य, अरबन मिडिल क्लास क्लाइम्बर्स, पृ.126
10. डॉ. नासिर अहमद खाँ, मिडिल क्लास इन इंडिया, पृ. 3
11. ए. आर. देसाई, सोशल बैकग्राउण्ड ऑफ इंडियन नेशनलिज्म, पृ. 182
12. नन्ददुलारे वाजपेयी, राष्ट्रीय साहित्य तथा अन्य निबंध, पृ. 11

मारक रोग कैंसर

अरविन्द कुमार*

केंकडे के घातक पँजों जैसा,
जकड़ लेता शरीर के हर किसी अंग,
कोशिका अथवा रक्त संचरण को,
न देखे किसी मानव तन की आयु- अवस्था,
रोगों में महारोग- मारक रोग है कैंसर ऐसा।
मानव तन में दानव बन जकड़ कर फँसा देता दंश अपना,
आयुर्वेद वैद्यक में अर्बुद रोग के नाम से जाना जाता,
रोग के लक्षण समक्ष आते ही,
सबके पैरों तले जमीन निकल जाती है।
यमलोक आँखों के आगे दिखाई देने लगता,
घर-संसार मानो हिल उठता है।
नवजात अबोध नव- कोंपल सम
जग में आए शिशु को भी नहीं छोड़ता
अपने यम पाश से।
चाहे किशोर बालक हो या प्रौढ़,वृद्धजन,
हर किसी को मानो जकड़ लेता अपने पाश में।
मानो अन्त काल निकट लगने लगता,
बिलबिला कर आक्रांत हो उठता,
जीवन कैंसर रोग की निर्दयी जकड़ से,
मानव जीवन को मुक्त कराने की,
स्वस्थ व निर्भय बनाने की,
चिकित्सा जगत के समक्ष चुनौती रही सदा,
कभी जीवन इस पार,कभी उस पार डोलता रहता
कैंसर रोगी का।
कैंसर उपचार संबंधी जानकारी एवं सूचना को,
घर-घर पहुँचाना लक्ष्य अपना बनाना है।
साथ-साथ इसके खान-पान एवं जीवन शैली
में सावधानी बरतना बेहतर विकल्प बन सकता है।
जीवन-मृत्यु के चक्र में ,
महारोग कैंसर की निर्दयी जकड़ से,
जन-जन को मुक्त कराना है।
मुक्त कर कैंसर रोग से,
स्वस्थ बनाना सबको,
अपना ध्येय बनाना है।

* हिन्दी अधिकारी, राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण संस्थान, नई दिल्ली-110067

धुएं के बादल

डॉ. संजय राठौर*

ऐ ! बादल धुएं के तुझे क्या कुदरत ने बनाया है
सुबह हो दोपहर शाम या हर रोज की
तरह बेबस रात
चाय की चुस्की टिफिन की रोटी या
किसी ढाबे की दाल फ्राय के बाद
कचहरी, थाने, स्कूल, खेल के मैदान से महाविद्यालय चिकित्सालय
और तो और छविगृहों के रूपहले पर्दों तक

क्यों? पीछा करता है मनुष्य की बेबसी का किसी साये की तरह
और तू मानों पूछता है क्या यह बेबस है जो अपना
भला नहीं समझता क्या यह मूर्ख है जो तर्क नहीं कर सकता
क्या यह नपुंसक है जो सामना नहीं कर सकता
क्या यह हार चुका है जो केवल आत्मसमर्पण की भाषा पहचानता है।
पर अब तू समझ ले इस निष्काम में चिंतन कर बहुत कुछ तय कर लिया है।
आंकड़ों का खेल, खेल-कर अंजाम देने की ठान ली है
विज्ञान की तुला पर तुझे तोला है
भूत काल के झरोखे से तेरा घमंड देख लिया है
विषपान तो देवों ने भी किया था पर मानवता की समृद्धि के लिए
फिर तू किस लिए अब इठला रहा है ऐ ! धुएं के बादल
जा अब इस नर ने तुझे धूल चटाने की ठान ली है
तेरी गुलामी की जंजीरों को तोड़कर आजादी का परचम लहराया है
वर्तमान को सजाने एवं भविष्य की खातिर
बीडी सिगरेट सिगार और यहाँ तक गुटखा पान मसाला को सदा के लिए
त्यागने की सौगंध आज उठाई है
ऐ धुएँ के बादल अब तू मान ही ले तेरी शामत आई है.....

*सहायक निदेशक(अस्पताल सेवाएं),कोलश्रम हॉस्पिटल एण्ड रिसर्च सेन्टर, मानिक बाग रोड, इंदौर, मध्य प्रदेश-452014
ई-मेल - drsanjayrathor@gmail.com

प्रभु ऐसी शक्ति देना मुझे

डा. त्रिलोक कुमार झा *

कष्टों में न घबराऊँ, प्रभु ऐसी भक्ति मुझे देना।
दृढ़ होकर मैं टकरा जाऊँ,प्रभु ऐसी शक्ति मुझे देना।।

नहीं चाहता संकट में प्रभु ! रक्षा करने तुम आओ।
मैं जूझ सकूँ, वह शक्ति-स्रोत बस, जीवन में भरते जाओ।।

नहीं चाह कोई शांत करे, जब चित्त व्यथित हो दुख से मेरा।
वह धैर्य शक्ति मुझमें भर दो, हँसकर गुण-गान करूँ तेरा।।

दुख में यदि कोई साथ न दे, फिर भी हिम्मत न हारूँ।
ईश्वर की ऐसी है इच्छा, बस हँस कर जीवन में धारूँ।।

विश्वास तुम्हारा अडिग रहे,वह भाव प्रभु मुझको देना।
श्रद्धा बन कर रहे प्रज्ज्वलित,वह दीप शिखा मुझको देना।।

कर्त्तव्यविमुख न हो जाऊँ, चाहे कितनी भी बाधा आये।
विश्वास तेरा मेरी शक्ति बने, बल क्षीण कहीं न हो जाय।।

अहंकार का नाम न हो और अकर्मण्य न कहलाऊँ।
चक्रव्यूह जीवन के भेदूँ, वह ज्ञान शक्ति मैं पा जाऊँ।।

मै वीर पुरूष, मै धीर पुरूष, मैं ज्योति-पुँज हूँ प्रभु तेरा।
हर बाधा से मैं टकराऊँ, हो शक्ति- पुँज जीवन मेरा।।

*वरिष्ठ परामर्शदाता, अस्थि रोग जिला चिकित्सालय, इटावा, उत्तर प्रदेश

मेरी बिटिया

गणेश शंकर श्रीवास्तव*

मेरी बिटिया की मुस्कान।
महका देती घर - दालान।

पढ़े-लिखेगी, करेगी मेहनत,
पास करेगी हर इम्तिहान।

कामयाबी के शिखर चूमेगी,
बढ़ाएगी हमारा सम्मान।

लेकिन दुख यही एक बिटिया
रहेगी घर बनकर मेहमान।

ले जाएगा राजकुमार फिर,
अपनी राजकुमारी पहचान।

फिर भी दिल में सदा रहोगी,
धड़कन बनकर, बनकर जान।।

* उप-संपादक (हिन्दी), राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण संस्थान, नई दिल्ली

दिल के दर्द का अफसाना

डा. श्रीधर द्विवेदी*

दिल का दौरा यूं ही नहीं पड़ता,
हृदयाघात अचानक नहीं होता,
दिल के खून की नलियाँ,
बेवजह बंद नहीं होती।
बीड़ी सिगरेट पी पीकर,
तम्बाकू गुटका खा खाकर,
बिना व्यायाम बदहवास जिंदगी जीकर,
शहर की पागल दौड़ में भागते जाना,
चिकनी चुपड़ी जंक चीजें खाते जाना,
कुदरत के वसूलों को ताक पर रखना,
दिल के दर्द का यह अफसाना,
अपनी बर्बादी का फरमान लिखते हम।

सहोदर बीमारियाँ

डा.श्रीधर द्विवेदी*

माँ के गर्भ में सुरक्षित, सुपोषित,
नौ महीने का जीवन कितना सुखद, सुमधुर,
शान्त प्रशान्त, अलग ब्रह्मांड,
फिर इस भीड़ भरी, कोलाहल, हर्ष-अपकर्ष
की दुनिया में अचानक आगमन।
माँ की गोद से घर का आंगन, माँ बाप का साया
फिर बाहरी दुनिया का मकड़जाल,
बाल से किशोर, युवावस्था की गर्मजोशी,
संगी साथियों का आचार विचार, अपनाती अपनी काया।
गांवों से शहरों की ओर, शहरों से महानगर,
महानगरों से विदेशों की तरफ, बेतहाशा दौड़-भाग,
नई जगहों की नई समस्याएँ, कठोर संघर्षमय जीवन।
नगर का तनाव भरा, धूल धुएँ से प्रदूषित वातावरण,
नई संस्कृति, सिगरेट, शराब, फास्ट फूड,
ताजे फल सब्जियों की कहाँ फुर्सत,

* प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, औषधि/हृदय-रोग निवारक विभाग, यू.सी.एम.एस. एवं जी.टी.बी. अस्पताल, दिल्ली-110095।

बैठे-ठाले का जीवन, टी.वी., कंप्यूटर, इंटरनेट से रमने वाली बात,
न सैर न व्यायाम, इतना काफी है ब्लड प्रेशर, डायबिटीज,
दिल के दौरे के बीजारोपण के लिए।
तनाव, क्रोध, अवसाद का एक और झटका,
कोमल रक्त नलिकाएँ, विक्षोभ के आघात का अतिरिक्त भार,
सहन न कर पाती, फूट पड़ता है उनका अंतर्मन,
हम बेसुध, बेखबर, हाँफते-खाँसते, सीने में भयंकर दर्द या पसीने से नहाये हुए,
जिंदगी और मौत के बीच झूलते नजर आते।
भला हो अच्छी एम्बुलेंस सेवाओं, चिकित्सा केन्द्रों, अच्छे इलाज
हमदर्द डाक्टर, बेहतर दवाईयों और सेवा सुश्रुषा का,
हम इस आफत-संकट से एक बार उबर तो जाते हैं,
किन्तु अपनी वर्षों पुरानी आदतों
मदिरा-धूम्रपान, गुटखा-खैनी, पूड़ी-पराठा, वही आपाधापी,
औषधि को समय पर न लेना, अस्पताल जाने की तोहमत कौन उठाये वाली बात।
हम फिर फँस जाते हैं इन, बीमारियों के भंवर-जाल चक्रव्यूह में,
पहले प्रेशर, फिर शक्कर, बाद में दिल का दौरा,
पक्षाघात आदि सहोदर बीमारियाँ
इनकी पकड़ में जो एक बार आया निकलना मुश्किल, ज्यादा सहज है,
पूर्व-उच्च रक्तचाप, पूर्व-मधुमेह, पूर्व-ऐथिरोस्कोलरोसिस पर विराम लगाना।
इन विनाशकारी महाव्याधियों में पाँच 'त' है
तम्बाकू, गोंद, तनाव, तला भूना तेलमय भोजन और आलसमय जीवन,
क्या इन पंच प्रपंचों से, हम मुक्त नहीं रख सकते?
'क्षिति, जल, पावक, गगन, समीर' निर्मित शरीर को।
कितना सुंदर-सुघर है हमारा प्रकृति प्रदत्त तन,
मुक्त वायु में विचरण, कितने सुंदर हैं ये फल-फूल, वनस्पतियाँ,
प्राणायाम, ध्यान, योग से साधित शरीर, मर्यादोचित जीवन, अर्थोपार्जन,
किसी का दिल नहीं दुखाना, प्रशस्त मन विराट ध्येय,
बस इतना काफी है बढ़े ब्लड प्रेशर, हृदयाघात, डायबिटीज,
पक्षाघात से मुक्ति के लिए, बाकी हरि इच्छा, इंशा अल्ला, वाहे गुरू,
ईसा मसीह, परमपिता की सदिच्छा और हमारी नियति!

पाठकों/लेखकों से अनुरोध

प्रिय पाठकों,

आशा है 'धारणा' से आप लाभान्वित हुए होंगे। कृपया अपने विचार एवं सुझाव हमें अवश्य भेजें। लेखकों से हमारा यह भी अनुरोध है कि आगामी अंक के लिए जो कि दिसम्बर, 2009 तक प्रकाशित होगा, लेखों की प्रकृति एवं स्वरूप के अनुकूल विषय वस्तु, उपसंहार, संदर्भसूची एवं सारिणी इत्यादि का यथोचित समावेश करें। उपयुक्त विषयों जैसे- विभिन्न राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रमों, राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण से संबंधित विषय, जनसंख्या संबंधी नीतियां एवं अवधारणाएं और लोक स्वास्थ्य, स्वास्थ्य में सामुदायिक भागीदारी एवं पंचायतों की भूमिका, अस्पताल प्रबंधन, मातृ शिशु स्वास्थ्य और प्रजनन स्वास्थ्य, कार्मिक प्रशिक्षण संबंधी केस अध्ययन तथा स्वास्थ्य से जुड़े अन्य ज्वलंत विषयों पर हम आपके मौलिक लेखों का स्वागत करते हैं। लेख टाइप किया हुआ अथवा सुस्पष्ट हस्तलिखित हो। लेख के अंत में अपना नाम पद व पूरा पता, फोन, ई-मेल इत्यादि अवश्य दें। अपने लेख हमें निम्नलिखित पते अथवा ई-मेल (director@nihfw.org अथवा ankuryadav41@yahoo.co.in पर भेजें:

मुख्य संपादक 'धारणा'
राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण संस्थान
बाबा गंगनाथ मार्ग, मुनिरका,
नई दिल्ली-110067

राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण संस्थान की स्थापना,राष्ट्रीय स्तर के दो भूतपूर्व संस्थानों - राष्ट्रीय परिवार नियोजन संस्थान (1962) तथा राष्ट्रीय स्वास्थ्य प्रशासन एवं शिक्षण संस्थान (1964), का विलय करके मार्च 9, 1977 को हुई थी। संस्थान का प्रमुख उद्देश्य विभिन्न गतिविधियों के माध्यम से देश में स्वास्थ्य और परिवार कल्याण कार्यक्रमों के विकास की दिशा में एक शीर्षस्थ तकनीकी संस्थान के रु प में अग्रणीय भूमिका एवं नेतृत्व प्रदान करना है। इन गतिविधियों में शिक्षा तथा प्रशिक्षण, अनुसंधान, मूल्यांकन, परियोजनाओं का संचालन, विशिष्ट सेवायें और परामर्श सेवायें प्रदान करना आदि शामिल है।

बुनियादी शिक्षा: संस्थान द्वारा अपनी शैक्षिक गतिविधियों के संचालन के माध्यम से स्वास्थ्य जनशक्ति का विकास करके देश के स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण कार्यक्रमों की प्रबन्धन व्यवस्था को सुदृढ़ करने की दिशा में योगदान किया जाता है। यह पाठ्यक्रम आवश्यकता पर आधारित तथा बहुअनुशासनिक स्वरुप के होते हैं। इन पाठ्यक्रमों में **(i)** एम.डी. (सामुदायिक स्वास्थ्य प्रशासन) में तीन वर्षीय स्नातकोत्तर डिग्री पाठ्यक्रम; **(ii)** स्वास्थ्य प्रशासन विषय में दो वर्षीय डिप्लोमा पाठ्यक्रम; **(iii)** दूर शिक्षण कार्यक्रम के माध्यम से स्वास्थ्य और परिवार कल्याण प्रबन्धन में स्नातकोत्तर सर्टीफिकेट पाठ्यक्रम; तथा **(iv)** अस्पताल प्रबन्धन में स्नातकोत्तर सर्टीफिकेट पाठ्यक्रम प्रमुख हैं।

प्रशिक्षण तथा कार्यशालायें: स्वास्थ्य के क्षेत्र में सेवा-कालीन प्रशिक्षण कार्यक्रमों के संचालन के माध्यम से उपयुक्त प्रकार के मानव संसाधनों का विकास करना इस संस्थान का एक प्रमुख दायित्व है। संस्थान द्वारा प्रति वर्ष लगभग 35-40 प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों/कार्यशालाओं (संस्थागत तथा बाह्य) का संचालन किया जाता है, जिनका उद्देश्य **(i)** प्रतिभागियों को स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण संबंधी नीतियों तथा कार्यक्रमों के उद्देश्यों और लक्ष्यों से अवगत कराना; **(ii)** इन कार्यक्रमों को क्रियान्वित कराने में आ रही समस्याओं के समाधान के बारे में उनके ज्ञान का अद्यतन करना; तथा **(iii)** इनके समाधान के उपाय सुझाना है।

अनुसंधान एवं मूल्यांकन: संस्थान द्वारा स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण के क्षेत्र में विभिन्न पक्षों पर अनुसंधान कार्यों को वरीयता प्रदान की जाती है। अधिकांश अनुसंधान अध्ययनों का सूत्रपात संस्थान द्वारा किया जाता है जबकि कुछ अन्य परियोजनाओं का संचालन स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय तथा अन्य राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय सहभागी संगठनों के आग्रह पर भी किया जाता है। संस्थान द्वारा संचालित अनुसंधान को प्रमुख रुप से दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है अर्थात क- जैव चिकित्सा अनुसंधान; तथा ख- स्वास्थ्य प्रणालियों संबंधी अनुसंधान।

राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के साथ नेटवर्किंग: अनुसंधान तथा प्रशिक्षण गतिविधियों के सुचारु संचालन की दिशा में संस्थान द्वारा विभिन्न राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय संस्थानों के साथ नेटवर्किंग की स्थापना भी की गई है। इनमें स्वास्थ्य प्रबंधन विषयक राष्ट्रीय कॉन्सोर्टियम तथा स्वास्थ्य प्रणाली अनुसंधान विषयक राष्ट्रीय कॉन्सोर्टियम आदि प्रमुख हैं। यह संस्थान स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय के तत्वाधान में राष्ट्रीय प्रजनन एवं शिशु स्वास्थ्य कार्यक्रम के अन्तर्गत देश भर में प्रशिक्षण कार्यक्रमों के आयोजन, प्रबोधन तथा समन्वयन के लिए एक नोडल एजेन्सी के रुप में महत्वपूर्ण भूमिका प्रदान कर रहा है।

विशिष्ट सेवायें: संस्थान द्वारा बांझपन तथा प्रजनन विकारों के उपचार आदि के लिए क्लिनिकल सेवायें भी प्रदान की जाती हैं। इसके अतिरिक्त संस्थान द्वारा स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विषयों पर अनेक प्रकाशन तथा सामयिक पत्रिकायें भी प्रकाशित की जाती हैं, जिनमें 'हैल्थ एण्ड पापूलेशन - परस्पेक्टिव्स एण्ड इशूज' तथा हिन्दी लेखों की तकनीकी पत्रिका 'धारणा' उल्लेखनीय हैं। संस्थान के राष्ट्रीय प्रालेखन केन्द्र द्वारा प्रकाशन, प्रेस क्लिपिंग और संदर्भ-ग्रन्थ सूची आदि जैसी सेवायें प्रदान करने के साथ-साथ मीडिया शिक्षण स्त्रोत केन्द्र द्वारा शैक्षिक गतिविधियों के समर्थन के लिए वीडियो फिल्म लायब्रेरी का संचालन भी किया जाता है।

परामर्श सेवायें: संस्थान के निदेशक एवं संकाय सदस्यों द्वारा स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण से सम्बद्ध विभिन्न विषय-क्षेत्रों में राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय एवं स्वैच्छिक संगठनों को परामर्श सेवायें भी प्रदान की जाती हैं।

आरोग्यम् सुखसम्पदा

राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण संस्थान

(स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार)

मुनीरका, नई दिल्ली-110067

वेबसाइट:www.nihfw.org

ई-मेल: director@nihfw.org